वर्ष : 18 अंक : 1 जनवरी-अप्रैल, 2013

उन्नति

विचार

चिरंतनता • जीवननिर्वाह • पशुधन

थार रेगिस्तान में अस्तित्व की लड़ाई

आप लोक शिक्षण व प्रशिक्षण के लिए विचार में प्रकाशित सामग्री का सहर्ष उपयोग कर सकते हैं। कृपया सौजन्य का उल्लेख करना न भूलें और साथ ही अपने उपयोग से हमें अवगत करायें ताकि हम भी उससे कुछ सीख सकें।

अनुक्रम

संपादकीय 3

विकास विचार

थार रेगिस्तान के क्षेत्र में दलितों की अकाल-प्रतिरोध शक्ति का विकास 4

नज़रिया

गुजरात में सामाजिक बहिष्कार और सामाजिक सुरक्षा 10

आपके लिए

मानव विकास रिपोर्ट - २०१३ 21

भारत में सामाजिक सुरक्षा बजटः एक मूल्यांकन 25

गतिविधियाँ 33

संदर्भ सामग्री 34

अंतिम व्यक्ति तक कैसे पहुंचे?

महात्मा गांधी ने एक नीतिगत मार्गदर्शन ताबीज़ के रूप में कुछ इस तरह दिया थाः आप जो कुछ करते हो क्या वह अंतिम व्यक्ति के लिए उपयोगी है? यदि हाँ, तो उसे करो। यदि नहीं, तो उसे मत करो। भारत में सरकार द्वारा केन्द्र और राज्य के स्तर पर गरीबी और बेरोजगारी के उन्मूलन के लिए और पिछड़े लोगों के सशक्तिकरण के लिए विभिन्न योजनाएं, परियोजनाएं, कार्यक्रम और विभिन्न कार्य चलाए जा रहे हैं। 1951 में पंचवर्षीय योजना की शुरूआत हुई और इस समय 12वीं पंचवर्षीय योजना चल रही है। इस अवधि के दौरान विभिन्न योजनाएं इसके लिए आई, और भारत सरकार और राज्य सरकारों इन योजनाओं के पीछे करोड़ों रुपये खर्च किए। फिर भी, देश में से गरीबी और बेरोजगारी का उन्मूलन वांछित स्तर पर नहीं हुआ जिससे इन प्रयासों को संदेह की नजरों से देखा जाता है।

जो मुक्त बाजार आधारित प्रणाली में विश्वास करते हैं, उनका कहना है कि सरकार को इस तरह के कार्यक्रमों को करने की जरूरत ही नहीं है। उनका तर्क है कि इस तरह के कार्यक्रमों और योजनाओं के कारण सरकारी सब्सिडी में वृद्धि होती है, और इसलिए खर्च में वृद्धि होती है। परिणाम स्वरूप करदाताओं के पैसे बेकार जाते हैं। उनका दूसरा तर्क यह है कि इन कार्यक्रमों को चलाने के लिए बहुत बड़ी व्यवस्था स्थापित करनी पड़ती है और यह व्यवस्था अपने आपको बनाए रखने के लिए किसी भी तरह से इस प्रकार के कार्यक्रमों के लिए उचित कारण ढूंढ लेती है। यह तंतत्र स्वयं भी भ्रष्ट है और उसे राजनीतिक समर्थन भी मिलता है। इससे, सरकार जो कुछ खर्च करती है वह गरीबों तक नहीं पहुँचता है। जब राजीव गांधी प्रधानमंत्री थे तब उन्होंने एक बार कहा था कि सरकार 1 रुपया खर्च करती है तो गरीबों तक 15 पैसा पहुँचता है। प्रशासनिक लागत और भ्रष्टाचार किस हद तक व्याप्त है वह इस बयान से साबित हो जाता है। इसीलिए आर्थिक स्वतंत्रता और बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के पैरोकार यह मानने को तैयार नहीं हैं कि सरकार गरीबों की सेवा कर सकती है। उन्हें सरकार के इन प्रयासों में संसाधनों की बर्बादी दिखाई देती है। उनका कहना है कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली, स्वास्थ्य योजनाओं और राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के तहत रोजगार सृजन योजनाओं के लिए करोड़ों रुपए बर्बाद हो रहे हैं क्योंकि उनका मानना है कि इसका बहुत कम लाभ वास्तविक लाभार्थियों को मिल पाता है।

इस तर्क के खिलाफ तर्क यह है कि भारत में आर्थिक असमानता बहुत व्यापक है और लगभग 50 करोड़ लोग अत्यधिक गरीबी में जीते हैं ऐसे उन्हें बाजार की दया पर नहीं छोड़ा जा सकता। राज्य द्वारा उनके आर्थिक और सामाजिक कल्याण के लिए खर्च करना उचित है। इसका कारण यह है कि भारत के संविधान की प्रस्तावना में स्वतंत्रता, समानता, न्याय और व्यक्ति की गरिमा को आदर्शों के रूप में माना गया है और इन्हें प्राप्त करने के लिए राज्य को क्या करना चाहिए वह राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों में बताया गया है। इसलिए बाजार जिनका ध्यान नहीं रख सकता उनका ध्यान सरकार द्वारा रखना उचित है। सरकार के गरीबी उन्मूलन और शिक्षा और स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिए रोजगार सृजन कार्यक्रम अच्छे हैं, लेकिन ये सब गरीबों तक उचित रूप से नहीं पहुंचते इसलिए यह व्यवस्था करनी चाहिए कि वे उन तक कैसे पहुंचें। ऐसा अनुमान है कि केंद्र सरकार और राज्य सरकारें, शिक्षा, स्वास्थ्य, सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि जैसी सामाजिक सुरक्षा योजनाओं पर प्रत्येक गरीब परिवार के लिए साल में लगभग 50,000 रुपये खर्च करती हैं। यह राशि वास्तव में गरीब और वंचित नागरिकों तक पहुँचाने के लिए स्थानीय संस्थाओं को मजबूत करने की जरूरत है। पंचायती राज और नगर पालिकाओं को मजबूत करने के लिए संविधान में 73 वां और 74 वां संशोधन किया गया। उन्हें शासन के तीसरे स्तर की संस्थाओं के रूप में मजबूत किया जाए तो उससे स्थानीय संस्थाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही पैदा की जा सकती है। यह पता लगाने के लिए एक महत्वपूर्ण तरीका सामाजिक अन्वेषण है। सूचना का अधिकार अधिनियम भी इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसकी धारा-42 स्पष्ट मार्गदर्शन प्रदान करती है कि सरकारी संगठनों को कौनसी जानकारी पहले से सूचित करनी चाहिए। इससे सरकार के सभी स्तरों पर पारदर्शिता पैदा करने की संभावनाएं काफी बढ़ गयी हैं तो सरकार के लोकाभिमुख बनाने की क्षमता भी काफी बढ़ गयी है। नतीजतन, राज्य को एक संस्था के रूप में बाजार जितना ही महत्व प्रदान करके पिछड़े नागरिकों के लिए उपयुक्त सेवाओं को प्रदान करने के लिए सक्रिय, सक्षम और कुशल और प्रभावी बनाने की आवश्यकता है।

थार रेगिस्तान के क्षेत्र में दलितों की अकाल-प्रतिरोध शक्ति का विकास

राजस्थान के कार्यक्रम कार्यालय की मुख्य कार्यवाहक अधिकारी **सुश्री स्वप्नी शाह** द्वारा लिखित इस लेख में जोधपुर और बाड़मेर जिले में 75 दूरस्थ गांवों में गरीबों की सूखा प्रतिरोध क्षमता बढ़ाने के लिए 'उन्नति' द्वारा की गई मध्यस्थता का वर्णन किया गया है। यहां जिस रणनीति की रूपरेखा दी गई है वह जलवायु से संबंधित बदलते प्रभावों, और भविष्यवाणी नहीं किए जा सकने वाले रूप को स्वीकार करती है। पश्चिम राजस्थान में सूखे और बंजर, और दलितों और महिलाओं की असहायता को दर्शाते हुए इस लेख में मौसम परिवर्तन की जानकारी और असहायता की जानकारी दी गई है और जिस तरह असहायता और गरीबी बढ़ती है उसका वर्णन किया गया है। अंत में, इस संदर्भ में संगठनात्मक मध्यस्थताओं और रणनीतियों का वर्णन किया गया है।

यह लेख भोपाल की स्कूल ऑफ प्लानिंग एन्ड आर्किटेक्चर की पत्रिका के 5वें अंक में छपे लेख का संक्षिप्त रूप है जिसका शीर्षक 'थार रेगिस्तान की कृषि पर जलवायु परिवर्तिता और अन्य कारकों के प्रभाव को समझना' था। इसके लेखक थे: अदिति फणसलकर और मीनळ पाठक। अदिति फणसलकर ने सेप्ट विश्वविद्यालय से मौसम परिवर्तन और चिरंतन विकास में एम.टैक. किया है उन्नति विकास शिक्षण संगठन, जोधपुर में इस विषय पर एक शोध लिखा था।

पश्चिम राजस्थान में सूखा और दलितों और महिलाओं की असहायता

भारत का थार रेगिस्तान 3.2 लाख वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है और भारत का 10 फीसदी भौगोलिक क्षेत्र इसमें है। लगभग 80 फीसदी रेगिस्तान राजस्थान में है और 20 फीसदी गुजरात में है। राजस्थान में देश के जल संसाधनों का केवल 1.5 प्रतिशत है। रेत के ढेर, छोटी बंजर पहाड़ियां, खनिजों के संदर्भ में समृद्ध धरती, प्रतिकूल जलवायु और जमीन का ऊंचा तापमान, सूरज का तीव्र ताप, कम वनस्पति, तेज हवाएं और कम और छिटपुट वर्षा इस रेगिस्तानी क्षेत्र की विशेषताएं हैं। मिट्टी के एक समान पैटर्न वाली है, मिट्टी रेतीली है, नमी सूख जाए वैसी नहीं है। बहुत कम वनस्पति की वजह से हवा की गति बढ़ने पर रेतीला तूफान आता है। इससे स्थानीय आजीविका में भारी मुश्किलें आती हैं।

राजस्थान के पश्चिमी भाग को लगातार सूखा प्रभावित क्षेत्र के रूप में वर्गीकृत किया गया है। सामान्य वर्षा की तुलना में 25 प्रतिशत कम वर्षा होने की संभावना 40 प्रतिशत होती है। 1972 में सिंचाई आयोग ने इस तरह इस भाग को वर्गीकृत किया था। अकाल में पानी की गंभीर कमी होती है, और इसलिए व्यापक रूप से फसलों को नुकसान पहुंचता है, पीने के पानी की गंभीर समस्या हो जाती है, भूगर्भ जल संसाधन फिर से समृद्ध नहीं होते, सतह जल संसाधन सूख जाते हैं और घास-चारे की उपलब्धता कम हो जाती है। कई विशेषज्ञ सूखे को सभी प्राकृतिक आपदाओं में सबसे विनाशकारी मानते हैं। एक सूखे में से लोगों को बाहर आने से पहले दूसरा अकाल आ जाता है। बारिश धीमी और छिटपुट होती है और यह अनुमान लगाना मुश्किल हो जाता है मानसून कब शुरू होगा और कब खत्म होगा। इसका प्रभाव अन्य प्राकृतिक आपदाओं से ज्यादा गंभीर होती है। राजस्थान में पिछले 100 साल में सूखे के बिना के 100 साल रहे हैं। 2009 में, भारत में पिछले दो दशकों में सबसे बड़ अकाल पड़ा था। राजस्थान में यह लगातार पांचवां सूखा था।

सूखे की मात्रा और तीव्रता लोगों की असहायता और प्रतिकारक क्षमता पर निर्भर करती हैं। थार रेगिस्तान में संसाधनों के बीच संबंध जीवन निर्वाह के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण हैं। सूखे का समाना करने वाली व्यवस्था पर अक्सर तनाव पैदा होता रहता है जिससे भी जीवन की गुणवत्ता बदतर होती है। इससे गरीबी के

कारण आपदा का खतरा भी बढ़ जाता है क्योंकि असहायता बढ़ जाती है, और अकाल के कारण स्थलांतर होता है, प्राकृतिक संसाधनों के इस्तेमाल के लिए संघर्ष बढ़ता है, खाद्य असुरक्षा बढ़ जाती है, आवासों को भी खतरा उत्पन्न हो जाता है, जैव विविधता को भी नुकसान पहुंचता है, सामाजिक - आर्थिक अस्थिरता पैदा होती है, गरीबी पैदा होती है, मरुस्थलीकरण के परिणाम स्वरूप सीमान्त भूमि पर कृषि उत्पादन के लिए खतरा उत्पन्न हो जाता है, गरीबी और अधिक गंभीर हो जाती है और आर्थिक विकास की गति धीमी हो जाती है। सूखे और मरुस्थलीकरण का प्रभाव गरीब परिवारों पर अधिक पड़ता है जो भोजन और घास-चारे की कमी का सामना नहीं कर सकते। इससे भुखमरी और असुरक्षा पैदा होती है।

असहायता का मतलब उस हालत से है जिसमें लोगों की संकट से निपटने की क्षमता सीमित होती है। वे यह दहशत और तनाव सहन नहीं कर सकते। इसमें आर्थिक निराधारता और सामाजिक अभाव शामिल होते हैं। शारीरिक कमजोरी भी होती है और समाज असमर्थ बन जाता है। भारत में सामाजिक बहिष्करण के लिए जाति - आधारित और महिला - पुरुष असमानता आधारित भेदभाव को प्रमुख कारणों में गिना गया है जिससे असमानता और गरीबी बढ़ जाती है। 2011 के सामाजिक - आर्थिक विश्लेषण के अनुसार अनुसूचित जनजातियों में, 47.4 प्रतिशत, अनुसूचित जातियों में 42.3 प्रतिशत और अन्य पिछड़े वर्ग में 31.9 प्रतिशत गरीबी है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का औसत प्रतिशत 33.8 प्रतिशत है। ग्रामीण राजस्थान में सामंतशाही ढांचा है, कठोर जाति प्रथा मौजूद है, मुख्यधारा की प्रक्रियाओं में दलितों की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक भागीदारी सीमित है।

77 प्रतिशत आबादी ग्रामीण है और उनका मुख्य व्यवसाय कृषि और पशुपालन है। अधिकांश दलित भूमिहीन हैं या गैर - सिंचित भूमि वाले हैं। कृषि आकाशी है और जीवन निर्वाह जितनी ही होती है और ज्यादातर खरीफ की फसल ही होती है। अनियमित वर्षा या सूखे के कारण कई छोटे किसान अपनी जमीन अस्थायी रूप से छोड़ देते हैं और काम के लिए शहरों की ओर पलायन करते हैं। बरसात के मौसम के बाद, कम से कम 33 फीसदी फसल बेकार हो जाती है। जब-जब सूखा पड़ता है दलित समुदाय की असहायता बढ़ जाती है। वे सामाजिक बहिष्करण का शिकार तो बनते ही हैं साथ ही शासन की संस्थाओं की सामाजिक जिम्मेदारी की कमी भी उन्हें पीड़ा देती है और वे अपने अधिकारों का उपभोग नहीं कर सकते हैं। सूखे का प्रतिकूल प्रभाव केवल कृषि उत्पादन पर ही नहीं पड़ता बल्कि प्रत्यक्ष रूप से पशुओं पर भी प्रभाव पड़ता है क्योंकि घास-चारे की कमी भी पैदा होती है। पशुपालक किसानों को इससे प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

थार रेगिस्तान की दलित महिलाओं को हर रोज कठिन परिस्थितियों में रहना पड़ता है। उनका मानव विकास सूचकांक कम है। 95 प्रतिशत महिलाएं कुपोषित हैं और स्वास्थ्य की गंभीर समस्याओं से पीड़ित हैं और उनके परिवारों को इस बारे में पता नहीं होता। थार में मातृ मृत्यु दर लगभग 600 है। महिलाओं के पास जमीन का स्वामित्व नहीं है अथवा उसमें उनकी भागीदारी नहीं है। घर या अन्य संसाधनों में भी वही स्थिति है। थार के रेगिस्तान क्षेत्र में देश में सबसे कम महिला साक्षरता है। बस्तियों के बीच दूरी है, आबादी बिखरी हुई है, आधारभूत सुविधाएं विकसित नहीं हुई हैं, वहाँ अभी भी भेदभाव है और उनकी सेवाओं की प्राप्ति बहुत सीमित है। लोगों, और विशेष रूप से महिलाओं की गतिशीलता बहुत कम है।

मौसम परिवर्तन और मौसम के अंतर का प्रभाव

भारत में मौसम परिवर्तन का प्रभाव और असहायता बहुत महत्वपूर्ण बात है जहां 70 प्रतिशत आबादी की आजीविका खेती पर निर्भर करती है। यह सकल घरेलू उत्पाद में 14.8 प्रतिशत का योगदान देती है। यह कृषि और मौसम काफी निर्भर रहने वाली बात है। प्रौद्योगिकी का विकास हुआ है और जीन - संशोधित फसलें आई हैं, फिर भी कृषि उत्पादन में मौसम एक प्रमुख कारक है। भारत में लगभग एक-तिहाई क्षेत्र में कटाव हो रहा है और चौथा भाग बंजर हो रहा है। दो - तिहाई शुष्क भूमि है और 68 फीसदी शुद्ध खेती क्षेत्र बारिश पर निर्भर है। जनसंख्या दबाव, संसाधनों के अत्यधिक उपयोग और उपलब्ध भूमि में कमी आदि से खेती पर

तालिक १: पश्चिमी राजस्थान में बरसात के दिन

वर्ष	दिन
1975	53
1985	24
1995	42
2005	21
2010	18 से 20

दबाव बढ़ता जा रहा है।

राजस्थान जलवायु के मामले में बहुत संवेदनशील क्षेत्र है और मौसम में बदलाव की चुनौतियों को झेलने में यह काफी असहाय है। पश्चिमी राजस्थान में हर साल काफी जलवायु परिवर्तन होता है। रेगिस्तान क्षेत्र में पिछले 25 वर्षों के दौरान जलवायु परिवर्तन काफी बदलाव हुआ है। अधिकतम और न्यूनतम तापमान में वृद्धि हुई है। 1957 से 2011 के दौरान औसत तापमान में 3-4 से.ग्रे. डिग्री सेल्सियस बढ़ोतरी हुई है। गर्मी बढ़ी है और हवा की गति बढ़ी है। पिछले 50 वर्ष के दौरान हवा की गति में वृद्धि हुई है। परिणाम स्वरूप रेतीले तूफान में वृद्धि हुई है। इसका कारण वनस्पति का काफी कम होना है। पारंपरिक खेती प्रबंधन के तरीके उपलब्ध नहीं हैं और इसलिए बोया हुआ बीज भी उड़ जाता है व उपजाऊ मिट्टी का भी कटाव हो रहा है। खेतों के आसपास उचित बाड़ नहीं है, फिर से बुवाई हो नहीं सकती और छोटे और सीमान्त किसानों पर उसका प्रभाव बहुत विपरीत पड़ता है। पिछले 100 वर्षों के दौरान पश्चिमी राजस्थान में औसत वर्षा 0.5 मिमी तक घट गयी है। हालांकि, पिछले 50 साल में बारिश के दिनों की संख्या आधी रह गई है। अध्ययन यह दर्शाते हैं कि पश्चिमी राजस्थान में पिछले 5 साल के दौरान, वर्षा में 30 फीसदी की कमी हुई है। 1961 के बाद अभाव के वर्षों की संख्या बढ़ी है। राज्य में अकाल के वर्षों में भी वृद्धि हुई है।

ग्रीन हाउस गैसों को छोड़ने की मात्रा में वृद्धि हुई है, और वातावरण में उनका जमाव बढ़ा है, इससे मानसून के अधिक अनिश्चित होने की संभावना है। बाढ़ में वृद्धि, लगातार सूखे और पानी की कमी के बढ़ने की भी संभावना है। तापमान बढ़ने से, नमी कम हो जाती है, फल जल्दी पकते हैं, जल का वाष्पीकरण बढ़ता है और इसलिए खाद्य उत्पादन में कमी होती है। इस सदी के अंत में, हवा की गति में 20 प्रतिशत वृद्धि की उम्मीद है। इस प्रकार, मौसमी बदलाव से संबंधित खतरों के बार-बार आने की संभावना बढ़ गई है। इसके परिणाम स्वरूप गरीब और वंचित लोगों की असहायता में वृद्धि हुई है। गरीबी और सामाजिक प्रभावों के मजबूत होने की उम्मीद है। स्त्री-पुरुष, उम्र, विकलांगता, जातीयता, भौगोलिक स्थिति, और स्थलांतरण के कारण उत्पन्न होने वाले भेदभावों में भी वृद्धि होगी। आपदाओं के जोखिम के खिलाफ गरीबों की प्रतिरोध शक्ति को बढ़ाने वाली रणनीतियों को बनाना आवश्यक हो गया है।

दलित समुदाय की प्रतिरोध क्षमता को बढ़ाने के लिए मध्यस्थताएं

पश्चिमी राजस्थान में अकाल उनकी संस्कृति और उनके जीवन में व्याप्त है। लोगों के अस्तित्व को बनाए रखने की रणनीति पानी, पशुपालन के साथ कृषि और सामुदायिक संपत्ति के संसाधनों के प्रभावी प्रबंधन पर आधारित है। इसके लिए उनकी सामूहिक इच्छा शक्ति के आधार पर कार्रवाई की जाती है। लोगों में एक कहावत प्रचलित है जिसका मतलब यह भी होता है: जिस किसी के पास 10 बकरी, एक ऊंट और 10 खेजड़ी के पेड़ हों तो वह सूखे के खिलाफ लड़ाई लड़ सकता है। 'उन्नति' की मध्यस्थताएं पारंपरिक रणनीतियों पर तैयार की गई हैं। इसका उद्देश्य अकाल का सार्थक और चिरंतन संचालित करने के लिए समुदाय को सशक्त बनाना है। समुदाय को उन सूखा शमन योजनाओं को बनाने में सहायता दी गई जिन्हें ग्राम पंचायत योजनाओं में शामिल किया गया था।

1. जल सुरक्षा

परियोजना का समर्थन प्रदान करके और महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत घरों में वर्षा जल भंडारण टैंक का निर्माण किया गया। इन टैंकों में 30 से 40 लीटर पानी भरा जा सकता है। यह भी महिलाओं के काम का बोझ कम कर

देता है। बड़ी उम्र के लोग बाहर जा सकते हैं और काम प्राप्त कर सकते हैं, उन्हें दैनिक उपयोग के लिए पानी मिलने के बारे में चिंता करने की ज़रूरत नहीं है। 2003-2012 के दौरान, बारिश का पानी संग्रह करने के लिए 719 टैंक बनाये गये। 2011 और 2012 में, 362 परिवारों को नरेगा के साथ जोड़कर पानी के टैंकों का निर्माण किया गया। सार्वजनिक स्रोतों से पानी की नियमित आपूर्ति के लिए प्रयास किए गए और इसके लिए दलित समुदायों को संगठित किया गया। पीने के साफ पानी के लिए अभियान चलाया गया। जल संसाधनों के स्रोतों और उपयोग के संदर्भ में 1000 परिवारों में सफाई की आदत डालने की कोशिश की गई। ऐसी व्यवस्था की गई कि जिन असहाय परिवारों को टैंकर से जल आपूर्ति होती है उसका प्रबंधन समुदाय के द्वारा हो

2. घास-चारे की सुरक्षा

पश्चिमी राजस्थान सूखे को एक तथ्य के रूप में स्वीकार लिया गया है। यही मौसम परिवर्तन के बारे में भी है। इससे पशुपालन आधारित अर्थव्यवस्था अधिक मजबूत बनी है। छोटे पशुपालकों और छोटे और सीमान्त किसानों के लिए घास-चारे की सुरक्षा महत्वपूर्ण है। दलित परिवारों के पास भेड़. बकरी होते हैं और वे उनके जीवन निर्वाह का विकल्प होते हैं। सूखे के समय में घास-चारे कीमत बढ़ जाती है जिससे उनके लिए पशुओं को रखना मुश्किल हो जाता है। किस्मत के मारे कई लोग अपने जानवरों को बेच देते हैं और स्थलांतरित कर जाते हैं। बागवानी कृषि के प्रयोग द्वारा परिवार के स्तर पर घास-चारा सुरक्षा मॉडल विकसित किया गया है।

अब तक जमीन के 125 टुकड़ों को इसके लिए समर्थन दिया गया है। बाड़ लगाना, मृदा परीक्षण, रोपण, वर्षा जल संग्रहण और छोड़ने की वृद्धि पर देखरेख आदि बातों के लिए और परिवारों को सहायता प्रदान की गई। तीन साल की अवधि में एक टुकड़े पर स्थाई खर्च 65,500 रुपये हुए और अस्थाई खर्च 32,800 रुपये हुए। बाड़ लगाने का खर्च 20,000 रुपये हुए और 12 फीट गहरे और 10 फीट चौड़े टैंक के निर्माण का खर्च 40,000 रुपये हुआ जिसमे 24,000 लीटर पानी का संग्रह किया जा सकता है। परिवहन सहित छोड़ने का खर्च 25,000 रुपये हुआ। कृषि उपकरणों के लिए 3000 रुपये की सहायता दी गई। तीन वर्षों के दौरान विशेषज्ञों ने घर पर आकर नियमित रूप से सलाह दी, इसके लिए 7,000 रुपये का खर्च हुआ। पानी के लिए 9,000 रुपये का खर्च हुआ, बारिश नहीं हुई उसके लिए 15,000 रुपये का खर्च हुआ। कीटनाशकों, पोषक तत्वों या दवाओं पर 16,800 रुपये का खर्च हुआ।

किसानों ने केन्द्रीय अर्ध-शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान का दौरा किया और उन्होंने विभिन्न प्रजातियों के पौधों के बारे में सलाह ली। अवसर वंचित दलित किसानों और विशेष रूप से महिलाओं को शुरू के तीन वर्षों के दौरान भूमि विकास और सिंचाई के लिए जो सहायता मिली उससे वे सूखे के जोखिम के खिलाफ लड़ाई लड़ सके और असहायता कम कर सके। सरकार के नरेगा और अन्य कार्यक्रमों तथा गैर सरकारी संगठनों के कार्यक्रमों के साथ उन्हें जोड़ा गया। नतीजतन, सीमान्त किसान फिर से अपनी भूमि से जुड़े। भूमि का हरेक टुकड़ा 1-5 बीघा का है और यह भी ध्यान रखा गया कि वह महिला के नाम पर हो। लोगों ने बेर, गुंदा, मूंग मोठ और फलों की किस्मों का चयन करके उगाया था।

रोपण और बाड़ की वजह से भूमि का संरक्षण हुआ और जमीन की उत्पादकता बढ़ी। फसल चक्र से उत्पादन में वृद्धि हुई परिणाम स्वरूप 21 तरह का घास उगाया गया जो भेड़-बकरों के लिए बहुत ही पौष्टिक था। कुछ का प्रयोग तो लोग सब्जी के रूप में करते थे। यह मिट्टी के लिए एक पोषक तत्त्व के रूप में भी कार्य करता है और मिट्टी के कटाव को रोकता है। इस तरह की फसलों से जैव विविधता भी बढ़ जाती है।

लोगों की क्षमता में लगातार वृद्धि की गई और विशेषज्ञों द्वारा तुरंत व्यावहारिक प्रशिक्षण भी दिया गया। इन विशेषज्ञों ने दीर्घकालिक हस्तक्षेप जारी रखने की जरूरत को साबित किया और उन्होंने सतत छोड़ने की वृद्धि और आवश्यक साधनों पर निगरानी रखी। इसके कारण बागायत वाले चारे को उगाने में लोगों की क्षमता में वृद्धि हुई। कलम लगाने का कौशल भी उनके पास था। उन्हें लोगों

और पंचायत सदस्यों का समर्थन प्राप्त हुआ। बीज के चयन के बारे में भी इन विशेषज्ञों ने सलाह दी। गांव स्तर पर भूमि के मालिकों ने मिलकर और औपचारिक के बजाय अनौपचारिक मंडल बनाया। उन्होंने नियमित रूप से बचत की, एक-दूसरे के खेत पर नजर रखने का काम किया। इससे कीटनाशकों, पानी और अन्य बातों के लिए उनके पास पैसे थे।

शुष्क और अकाल संभावित क्षेत्रों में पशुपालन, पेड़ और चराई की खेती, सब्जी और फलों के फसल चक्र आदि सबसे अच्छा वैकल्पिक मॉडल माना जाता है। भेड़.बकरी पालन और भूमि के उपयुक्त उपयोग की रणनीति रेगिस्तान के वातावरण में साथ-सात चलती है। पारंपरिक जीवन निर्वाह के इन मौकों को मजबूत किया जाए तो राज्य का यह क्षेत्र भी मजबूत होगा। राजस्थान सरकार की पशुपालन नीति भी इस शुष्क क्षेत्र में खेती के बजाय, पशुपालन का समर्थन करती है। देश के 12 प्रतिशत मवेशी राजस्थान में हैं और राज्य के कुल घरेलू उत्पादन में ये 9 फीसदी का योगदान देते हैं। 2007 की पशुओं की गणना के अनुसार राजस्थान 218.82 लाख बकरियां हैं। कुल मवेशी 579 लाख हैं। 1988 से 2003 के बीच पांच सूखे पड़े जिसका 90 फीसदी जिलों में विपरीत प्रभाव पड़ा था। इस अवधि के दौरान बकरियों की संख्या 2.15 लाख बढ़ी थी।

3. स्वास्थ्य सुरक्षा

स्वास्थ्य देखभाल सेवाएं दूर हैं। लोग स्वास्थ्य और स्वच्छता को कम प्रधानता देते हैं और क्योंकि भेदभाव होता है इसलिए स्वास्थ्य खराब है। महिला ग्राम स्वास्थ्य स्वयंसेवकों को तैयार करके महिलाओं और लड़कियों के स्वास्थ्य पर ध्यान केंद्रित किया गया। एक किट तैयार की गई और उससे स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं और समुदाय के बीच संपर्क सेतु बनाया गया। संक्रमण और कुपोषण संबंधी समस्या दूर हों और उसका विष चक्र पैदा न हो इसका ध्यान रखा गया।

4. पशु उपचार

राजस्थान ऐसा पहला राज्य है जहां निजी क्षेत्र में पशु चिकित्सा कॉलेजों और संस्थानों की स्थापना हुई है। राजस्थान में 12 फीसदी दूध बकरी का होता है। इससे हिमायत और सहयोग के लिए कई अवसर पैदा होते हैं। सरकार के 1000 पशु चिकित्सालय हैं। वे निःशुल्क दवा और सलाह प्रदान करते हैं। बकरियों के लिए प्रतिरोधात्मक देखभाल और निवारक उपचार उपलब्ध है लेकिन लोग इसका इस्तेमाल नहीं कर सकते क्योंकि गांव दूरदराज में हैं, परिवहन और अन्य सुविधाओं का अभाव है। इसके अलावा, परिवारों के पास बकरियों की संख्या भी कम होती है। पशु स्वास्थ्य सेवा अमीर पशुपालकों और किसानों तक ही सीमित हो गई है। बकरियों का टीकाकरण हो और छोटे पशुपालकों को पशुपालन के बारे में शिक्षा मिले और उनकी जरूरतों के हिसाब से सरकारी सेवाएं मिलें वह भी हस्तक्षेप की रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

5. जोखिम का हस्तांतरण, सामाजिक सुरक्षा और सेवाएं

विकासशील देशों में सामाजिक सुरक्षा की भूमिका को अधिक से

तालिक २: घासचारा - बागवानी खेती की आय (रु.)

किसमें से	वर्ष-1	वर्ष-2	वर्ष-3	वर्ष-4	वर्ष-5	कुल
फसल रोटेशन	2,000	2,000	2,000	2,000	2,000	10,000
फसल और चारा/ केवल चारा	1,000	1,000 से 2,000	1,000 से 3,000	1,000 से 4,000	1,000 से 5,000	5,000 से 14,000
फल बिक्री			2,000 से 5,000	6,000 से 15,000	10,000 से 20,000	18,000 से 40,000

अधिक स्वीकार किया जा रहा है। इससे गरीबों और वंचितों को जोखिम और असहायता के खिलाफ रक्षण मिलता है। साक्ष्यों से यह भी पता चलता है कि गरीबी को कम करने में और लोगों को उत्पादक आजीविका के लिए मोड़ने में वह प्रमुख भूमिका निभा सकता है। बीमा सेवाएं और सरकार के सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम समुदाय की प्रतिकारक क्षमता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

इसलिए समुदाय को नियमित रूप से इन कार्यक्रमों के बारे में शिक्षित किया गया था। दलित महिलाओं के मंडल के द्वारा समुदाय आधारित पर्यवेक्षण शुरू किया गया था। इससे यह संभव हुआ कि सरकारी एजेंसियां लोगों की जरूरतों और प्रतिक्रियाओं को ध्यान में लेती हैं। भागीदारी तरीकों से सूचना का संग्रह किया गया और विश्लेषण किया गया था। इसके परिणाम स्वरूप आंगनवाड़ी में से पौष्टिक भोजन लेने के लिए लोग सक्रिय हुए, आंगनवाड़ी समय पर खुले, नरेगा के तहत शिकायतें करना आदि बातें संभव हुई। मांगने पर भी काम नहीं मिलने, वेतन देरी से मिलने, आदि जैसी शिकायतें नरेगा के क्रियान्वयन के संदर्भ में हुई।

6. दलितों की भागीदारी के साथ सार्वजनिक संपत्ति के संसाधनों का विकास

सार्वजनिक संपत्ति के संसाधन केवल संसाधन प्रबंधन के लिए ही नहीं बल्कि गरीबों को और भूमिहीनों को आजीविका की सहायता के लिए भी महत्वपूर्ण है। भारत के शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों के 21 जिलों के 85 गांवों में किया गया एक अध्ययन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक संपत्ति संसाधनों का महत्व बताता है, और यह बताता है कि यह एक सुरक्षा तंत्र के रूप में कार्य करता है। भारत के शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों में सार्वजनिक संपत्ति संसाधन पर्यावरण क्षरण, गरीबी और स्थलांतर के बीच संबंधों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। देश में 78 प्रतिशत किसान छोटे और सीमान्त किसान हैं, उनके लिए आय का मुख्य स्रोत पशुपालन है। वे पारंपरिक रूप से घास-चारे के लिए सार्वजनिक चारागाह निर्भर रहते आए हैं। यह कृषि क्षेत्र में लगातार वृद्धि बनाए रखने और ग्रामीण गरीबी को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह सबसे मूल्यवान संसाधन बन जाता है, खासकर जब बहुत छोटी जमीदारी हो। सार्वजनिक संपत्ति संसाधन कितनी मात्रा में उपलब्ध हैं और उनकी हालत अच्छी है या नहीं, यह पशुपालन आधारित आजीविका प्रभावी होती है या नहीं यह निर्धारित करने में एक महत्वपूर्ण कारक है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा बताए अनुसार 1999-2006 के दौरान सामुदायिक संपत्ति संसाधनों में गिरावट हो रही है। गरीबों और वंचितों का उसके साथ संबंध है। पश्चिमी राजस्थान की 15 ग्राम पंचायतों का संसाधन मानचित्रण तैयार कराया तो पता चला कि दलितों को सार्वजनिक भूमि का लाभ प्राप्त नहीं होता। थार रेगिस्तान क्षेत्र में गोचर भूमि बरसाती पानी संग्रह संरचना के रखरखाव के लिए सुविकसित संस्थागत व्यवस्था है। 1950-52 से 1982-84 के दौरान सार्वजनिक संपत्ति संसाधन 55 प्रतिशत तक घट गए हैं। क्योंकि सिंचित खेती बढ़ी है और कृषि ग्रामीण प्रबंधन संस्थान खत्म हो गए हैं। सेवन और धामन जैसी उच्च गुणवत्ता वाली घास अब लगभग गायब हो गयी हैं। सार्वजनिक संपत्ति संसाधन का पुनःसर्जन थार रेगिस्तान के नाजुक जैविक पर्यावरण के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। दलितों और महिलाओं की भागीदारी वाले नए संस्थान बनें तो की विशेषता सार्वजनिक संपत्ति संसाधनों का क्षरण रुक सकता है। यह गांवों में सत्ता के ढांचे को भी प्रभावित करे और वह उन्हें दलितों और महिलाओं का पक्ष लेने वाला बनाए।

यह बात अधिक से अधिक स्वीकृति पाती जा रही है कि सार्वजनिक संपत्ति के संसाधनों के रखरखाव और प्रबंधन में स्थानीय शासन की संस्थाएं और समुदाय भी हितधारक हैं। उन पर दबाव के बारे में जनवरी - 2011 में सुप्रीम कोर्ट के फैसला और सभी राज्य सरकारों को इस संदर्भ में दिया गया आदेश महत्वपूर्ण है। राजस्थान सरकार ने 2010 में सार्वजनिक संपत्ति संसाधन विकास पर एक नीति बनाकर महत्वपूर्ण कदम उठाया है, नरेगा -2011 के तहत दिशा निर्देशों को भी इसमें शामिल किया गया है। 2011 और 2012 में दबाव हटाने के लिए और 2012-13 में अपनी विकास के लिए योजनाओं में शामिल करने के लिए नीति भी अपनायी गई है।

गुजरात में सामाजिक बहिष्कार और सामाजिक सुरक्षा

गुजरात के अर्थशास्त्र मंडल की फरवरी-2013 में आणंद में आयोजित वार्षिक परिषद में इस लेख को मुख्य व्याख्यान के रूप में **श्री हेमन्तकुमार शाह** द्वारा प्रस्तुत किया गया था।

प्रस्तावना

गुजरात औद्योगिक रूप से और प्रति व्यक्ति आय के मामले में सबसे विकसित राज्यों में से एक है। लेकिन गुजरात में सामाजिक और आर्थिक विकास में से बहुत से व्यक्तियों और समुदायों के विकास के बारे में उनके अधिकारों और उनके अवसरों का बहिष्कार होता रहता है। इसके अलावा, उन्हें संसाधनों को भी गुमाना पड़ता है। विशेष रूप से, किसानों को अपनी जमीनों से अलग होने की घटनाएं उल्लेखनीय हैं। इसके परिणाम स्वरूप सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में अभाव पैदा होता है, सीमांतीकरण पैदा होता है। सामान्य रूप में, गरीबी और बेरोजगारी इसके मुख्य कारण हैं। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढांचे ही इस तरह के हैं कि जिनसे गरीबी और बेरोजगारी का जन्म होता है और चालू रहती है। विख्यात समाजशास्त्री जोहान गाल्टुंग इसे ढांचागत या अप्रत्यक्ष हिंसा मानते हैं।

गुजरात में आबादी का एक बड़ा हिस्सा विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं की प्राप्ति, सुरक्षा और मानव अधिकारों की प्राप्ति, भूमि और श्रम बाजार के अभाव और आर्थिक विकास में से बहिष्कार का अनुभव करता है और इसलिए सरकार द्वारा उसे सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना आवश्यक है। मानव विकास के क्षेत्र में गुजरात तो आगे बढ़ ही सकता है।

गुजरात में मानव विकास

गुजरात औद्योगिक दृष्टि से विकसित राज्य माना जाता है। लेकिन गुजरात में मानव विकास बहुत कम हुआ जो एक बड़ी चिंता की बात है। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गुजरात सरकार ने राज्य कि जनता की शिक्षा और स्वास्थ्य पर काफी कम ध्यान दिया है। भारतीय योजना आयोग ने भारत मानव विकास रिपोर्ट -2011 प्रकाशित की है। उनमें से गुजरात के बारे में निम्नलिखित विवरण तैयार किया जा सकता है:

1. 1999-2000 में मानव विकास के मामले में गुजरात 10वें स्थान पर था, और 2007-08 में यह 11वां ही है।
2. उपरोक्त अवधि के दौरान मानव विकास कितना बढ़ा वह महत्वपूर्ण है। भारत भर में मानव विकास लगभग 20 फीसदी बढ़ा और यह औसत की तुलना में नौ राज्यों में मानव विकास के अधिक दर से बढ़ा है। गुजरात में मानव विकास में केवल 11 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, और उत्तर प्रदेश, बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और झारखंड जैसे राज्य गुजरात से बहुत ज्यादा आगे हैं। मानव विकास वृद्धि दर में गुजरात नीचे से सातवें क्रम पर है। इस प्रकार, मानव विकास के मामले में अब तक गुजरात काफी पीछे है और प्रगति की गति भी काफी धीमी है।
3. मानव विकास में भी आय महत्वपूर्ण है। इसकी गणना में प्रति व्यक्ति मासिक खर्च को ध्यान में रखा जाता है। इस दृष्टि से देखते हुए आय में प्रतिशत वार परिवर्तन 1999-2000 से 2007-08 तक की अवधि में गुजरात के संदर्भ में लगभग 12 प्रतिशत रहा है। देश भर में इसी अवधि के दौरान लगभग 21 प्रतिशत रहा था। गुजरात इस संदर्भ में 15वें स्थान पर है।
4. साक्षरता दर और बच्चे कितने वर्षों तक स्कूल पढ़ते हैं इसे ध्यान में लेकर शिक्षा सूचकांक निकाला जाता है। इसके आधार पर तो गुजरात की स्थिति बहुत खराब है। गुजरात का क्रम इसमें अंतिम से तीसरा है। केवल दिल्ली और गोवा ही गुजरात से पीछे हैं, बाकी के सभी राज्य गुजरात से आगे हैं। इसमें गुजरात 21 वें स्थान पर है।

मानव विकास में गुजरात का क्रम

क्रम	विवरण	भारत में गुजरात का क्रम
1.	2007-08 में मानव विकास	11
2.	1999-2000 की तुलना में वर्ष 2007-08 में मानव विकास में प्रतिशतवार वृद्धि	18
3.	1999-2000 की तुलना में वर्ष 2007-08 में राजस्व सूचकांकों में प्रतिशतवार की वृद्धि	15
4.	1999-2000 की तुलना में वर्ष 2007-08 में राजस्व सूचकांकों में प्रतिशतवार की वृद्धि	21
5.	वर्ष 2007-08 में बेरोजगारी की दर (ग्रामीण क्षेत्रों में)	5
6.	वर्ष 2007-08 में शहरी क्षेत्रों में बेरोजगारी दर	5
7.	वर्ष 2004-05 में गरीबी की मात्रा (16.8 प्रतिशत)	13
8.	वर्ष 2005-06 में गंभीर एनीमिया से पीड़ित महिलाओं का अनुपात (2.6 प्रतिशत)	26
9.	वर्ष 2005-06 में सामान्य एनीमिया से पीड़ित महिलाओं का अनुपात (16.5 प्रतिशत) 2	4
10.	किसी भी प्रकार के एनीमिया से पीड़ित महिलाओं का अनुपात (2005-06) (55.3 प्रतिशत)	17
11.	पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में मृत्यु दर (2008)	11
12.	शिशु मृत्यु दर (2009)	24
13.	किसी भी प्रकार के एनीमिया से पीड़ित पांच वर्ष तक के बच्चों का अनुपात (2005-06) (69.7 प्रतिशत)	19

समाचार स्रोतः मानव विकास रिपोर्ट, 2011, योजना आयोग, भारत सरकार

5. स्वास्थ्य सूचकांक में औसत आयु को ध्यान में रखा जाता है। इसमें भी गुजरात 12 वें स्थान पर है। उक्त अवधि के दौरान, गुजरात में स्वास्थ्य सूचकांक में लगभग 10 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है जबकि पूरे देश का औसत 13 प्रतिशत है।
6. गुजरात के ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की दर 2004-05 में 4.5 प्रतिशत थी और 2007-08 में यह घटकर 3.4 प्रतिशत हो गई। परंतु 2004-05 में गुजरात का नौवां स्थान था जबकि वर्ष 2007-08 में पांचवां हुआ।
7. गुजरात के शहरी क्षेत्रों में वर्ष 2004-05 में बेरोजगारी की दर 4.7 प्रतिशत थी। इसमें गुजरात पांचवें स्थान पर था। 2007-08 में इस दर में गिरावट आई और 3.8 प्रतिशत हो गई और गुजरात पांचवें स्थान पर ही रहा।
8. 2004-05 में गुजरात में गरीबी का प्रतिशत 16.8 था और देश भर में अन्य 12 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में गरीबी की मात्रा गुजरात से भी कम थी।
9. वर्ष 2005-06 में, गंभीर एनीमिया से पीड़ित महिलाओं का अनुपात 2.6 फीसदी थी और गुजरात 26 वें स्थान पर था। भारत में यह अनुपात 1.8 प्रतिशत ही था। गुजरात में महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति कितना बुरी है यह इस से कहा जा सकता है।
10. वर्ष 2005-06 में 16.5 प्रतिशत महिलाएं हल्के एनीमिया से पीड़ित थी। 1998-99 में यह प्रतिशत 14.4 था। इसमें

वृद्धि हुई और गुजरात 24 वें स्थान पर था।

11. 1998-99 में किसी भी प्रकार के एनीमिया से पीड़ित महिलाओं का प्रतिशत 46.3 था और जो 2005-06 में बढ़कर 55.3 प्रतिशत हो गया। इसमें गुजरात 2005-06 में 17वें स्थान पर था।
12. गुजरात में 2008 में पांच वर्ष से कम के बच्चों की मृत्यु दर प्रति हजार 60 थी, और उसमें गुजरात में 11 वें स्थान पर है। और लड़कों में यह प्रति हजार 58 है, और उसमें भी गुजरात 10वें स्थान पर था। लड़कियों में यह दर प्रति हजार 67 है, और यह गुजरात 10वें स्थान पर था।
13. गुजरात में 2009 में शिशु मृत्यु दर प्रति हजार 48 थी और गुजरात 24वें स्थान पर था। लड़कों में शिशु मृत्यु दर 47 थी और लड़कियों में 48 थी जिसमें गुजरात क्रमशः 25वें और 24वें स्थान पर था।
14. गुजरात में वर्ष 2005-06 में किसी भी तरह के एनिमिया से पीड़ित पांच वर्ष तक की आयु वर्ग के बच्चों का प्रतिशत 69.7 था। गुजरात इसमें 18 राज्यों से पीछे था।

जमीन से कटते किसान

गुजरात में विकास के लिए भूमि का अधिग्रहण किया जाता है और भूमि देने वाले को मुआवजा दिया जाता है। लेन्सी लोबो और शशीकांत परमार द्वारा किए गए अध्ययन के अनुसार गुजरात में जमीन के अधिग्रहण के लिए दिए जाने वाले मुआवजे से एक बात साफ है कि विकास योजना से विस्थापित और प्रभावित लोगों को कभी-कभार भूमि अधिग्रहण से संतोषजनक मुआवजा मिला होगा लेकिन इसको छोड़कर पुनर्वास और पुनर्वास के लिए कोई व्यवस्था नहीं हुई या मान्यता नहीं दी गई। गुजरात में भूमि अधिग्रहण अधिनियम के तहत जमीन के लिए जमीन देना राज्य सरकार के लिए बाध्यकारी नहीं है। इस अध्ययन से पता चला है कि कई बार मुआवजे की राशि भूमि के मूल्य के आधार पर और योजना अधिकारियों और काम की तात्कालिकता के आधार पर निर्धारित की जाती है।

2000 और 2006 के दौरान राज्य में सिंचाई परियोजनाओं के लिए जिस 10158.45 हेक्टेयर भूमि का अधिग्रहण किया गया था उसके परिणामस्वरूप 15,731 परिवार प्रभावित हुए थे। इसमें प्रति हेक्टेयर मुआवजा 56,258 रुपये दिया गया था। हालांकि, एक परिवार को मुआवजा 36,329 रुपये मिला था। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि गुजरात में सिंचाई योजनाओं में जो मुआवजा मिलता है, उसकी तुलना में उद्योग के लिए अधिग्रहीत की जा रही भूमि में अधिक मुआवजा मिलता है। 2000-06 में उद्योग के लिए जो 3006 हेक्टेयर भूमि अधिग्रहित की गई थी उसमें 424 परिवार प्रभावित हुए थे। इसमें प्रति हेक्टेयर 39,684 रु. का मुआवजा दिया गया था, और वह प्रति परिवार 2,81,375 था।

उल्लेखनीय बात यह है कि 1991-2000 के दौरान उद्योगों के लिए जिस भूमि का अधिग्रहण किया गया था वह 5,626 हेक्टेयर थी और उसमें 2888 परिवारों का विस्थापन हुआ था। उस समय प्रति हेक्टेयर 1,40,234 रु. के मुआवजे का भुगतान किया गया था और यह मुआवजा प्रति परिवार 2,73,200 रुपये था। इसका मतलब स्पष्ट है कि 2000-06 की अवधि के दौरान उद्योगों को बहुत सस्ती कीमत पर जमीनें मिली थी। 1991-2000 में जमीन के मालिकों को प्रति हेक्टेयर 1.40 लाख रु. मिले और 2000-06 के दौरान 39,700 रु. मिले। जमीन की कीमतें बढ़ने की बजाय घटी जबकि समग्र गुजरात में कृषि या गैर - कृषि भूमि की कीमतों में वृद्धि हुई हो और मकानों के भाव बढ़े हों तब उद्योगपतियों को अतीत की तुलना में कम कीमत पर जमीनें मिली थी।

जिस जमीन का अधिग्रहण किया जाता है उसकी कीमत इस पर निर्भर करती है कि भूमि मालिकों की सौदेबाजी की शक्ति कितनी है और भूमि खरीदने वालों के साथ बातचीत करने के लिए उनका कौशल कितना है। संक्षेप में, वहां जमीन का बाजार कैसा है उस पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए गैर - हाइडल बिजली परियोजना के लिए गुजरात बिजली बोर्ड ने प्रति हेक्टेयर 12,000 रु. मुआवजे का भुगतान किया था। भरूच में उसी स्थान पर की गैस अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड (गेल) ने मुआवजे के रूप 55,000 रुपये प्रति हेक्टेयर का भुगतान किया था। इस प्रकार कहा जा सकता है कि राज्य सरकार की कंपनी की तुलना में केंद्र

सरकार की कंपनी अधिक मुआवजे का भुगतान करती हैं।

कई बार भूमि अधिग्रहण के एवज में जो मुआवजा दिया जाता है उसमें जिले वार काफी अंतर देखा जाता है। खेड़ा जिले में प्राप्त प्रति हेक्टेयर मुआवजे की राशि में पंचमहल और आणंद जिले की तुलना में अधिक थी। अनुसंधानकर्ता का निष्कर्ष यह है कि मुआवजे में यह अंतर परियोजना के प्रकार के साथ ही भूमि अधिग्रहण करने वाले संगठन पर निर्भर करता है।

शिक्षा क्षेत्र में वंचितता और कम निवेश

प्राथमिक शिक्षा बच्चों का मौलिक अधिकार है। इसके लिए देश की संसद ने कानून बनाया है। शिक्षा भावी नागरिकों की नींव है। परंतु गुजरात में राज्य सरकार ने स्कूली शिक्षा को बेहाल कर दिया है और अभिभावकों को शिक्षा की महंगी स्कूल में जाना पड़ता है। गुजरात में स्कूली शिक्षा प्रणाली कितनी नीचे गिर गई है उसकी आंखें खोल देने वाला कुछ विवरण यहाँ दिया गया है:

1. **गरीब छात्रों के लिए सरकार के पास पैसे नहीं हैं**
   गुजरात सरकार ने मई -2012 में गुजरात उच्च न्यायालय को कहा कि सामाजिक - आर्थिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के छात्रों के लिए पूर्व प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त पैसा नहीं है। उच्च न्यायालय द्वारा राज्य के अनुदान वाले स्कूलों में प्रति माह प्रति छात्र 45 रु. का शुल्क लेने का आदेश रद्द कर दिया गया था तो सरकार ने उच्च न्यायालय में इस आदेश के खिलाफ नया आवेदन करके कहा कि बच्चों को निशुल्क पढ़ाने के लिए उनके पास पैसे नहीं हैं। गुजरात सरकार का 2013-14 का बजट 1.14 लाख करोड़ रुपये का है लेकिन उसके पास बच्चों को पढ़ाने के लिए पैसे नहीं हैं।

2. **शिक्षा के अधिकार कानून का पालन देरी से और अधूरे मन से**
   शिक्षा के अधिकार के कानून के तहत केंद्र सरकार ने जो नमूने रूप नियमों को बनाया है उन्हें गुजरात सरकार ने दो साल में स्वीकार किया था। कानून स्पष्ट रूप से कहता है कि किसी भी तरह के दान या साक्षात्कार लिए बिना छात्र को स्कूल में दाखिला मिलना चाहिए। परंतु राज्य सरकार ने 09/03/2011 परिपत्र के द्वारा निजी संस्थाओं को प्रवेश प्रक्रिया में मनमानी करने की अनुमति दे दी। दिल्ली, राजस्थान और महाराष्ट्र सहित नौ राज्यों ने इन कानूनों और नियमों का अक्षरशः पालन करना किया है।

3. **राज्य की आबादी बढ़ी लेकिन सरकारी स्कूलों में बच्चे घटे**
   प्राथमिक शिक्षा का किस हद तक निजीकरण कर दिया गया है यह गुजरात सरकार के ही आंकड़े बताते हैं। 1999-2000 में गुजरात में सरकारी स्कूलों में 81.34 लाख बच्चे पढ़ते थे। 2011-12 में उनकी संख्या 60.32 लाख रह गई है तो वाइब्रेंट गुजरात में ये बच्चे कहां गए? इन लाखों बच्चों को स्वनिर्भर (निजी) स्कूलों में प्रवेश लेना पड़ा। उनके माता-पिता को स्कूलों में ऊंची फीस भरनी पड़ी अथवा तो अपने बच्चों को पढ़ाना बंद करना पड़ा।

4. **स्कूलों में शिक्षक ही नहीं हैं**
   दिसंबर -2011 में गुजरात की उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों में लगभग 43,000 शिक्षकों के स्थान खाली थे। एक शिक्षक के सेवानिवृत्त होने से पहले ही तुरंत दूसरे शिक्षक की भर्ती होनी चाहिए। लेकिन गुजरात में राज्य सरकार को ऐसी कोई व्यवस्था करने का ध्यान ही नहीं आता।

5. **सर्व शिक्षा अभियान में दो साल में 1340 करोड़ रुपए बिना उपयोग के पड़े रहे**
   सर्व शिक्षा अभियान भारत सरकार की योजना है जिसका उद्देश्य प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाना है। गुजरात सरकार ने इस मद में आवंटित करोड़ों रुपए खर्च ही नहीं किए और राज्य में बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा की ठीक से व्यवस्था ही नहीं की। वर्ष 2009-10 में 130 करोड़ रुपये, 2010-11 में 267 करोड़ रुपए और 2011-12 में 956 करोड़ रुपये मिलाकर तीन साल में करीब 1340 करोड़ रुपये बिना उपयोग के पड़े रहे। अहमदाबाद में 40 प्रतिशत, राजकोट में 35 प्रतिशत और बड़ौदा में 28 प्रतिशत

राशि पड़ी रही और इससे महानगरों में गरीब बच्चों को गुणवत्ता वाली शिक्षा नहीं मिल पाई।

6. लाखों बच्चे बीच में ही स्कूल छोड़ देते हैं

गुजरात में प्राथमिक शिक्षा में हुई गिरावट के सबूत इस प्रकार हैं। मार्च -2013 में राज्य में ली गई बोर्ड की दसवीं कक्षा, यानि एस.एस.सी. की परीक्षा में लगभग 10.30 लाख बच्चे बैठे थे। ये छात्र 10 साल पहले, यानि 2003 में राज्य में पहली कक्षा में प्रवेश किया था। 2003 में पहली कक्षा में प्रवेश करने वाले छात्रों की संख्या लगभग 16.80 लाख थी। तो इन 10 साल में 6.75 लाख छात्र गुजरात में कहां गए? उन्होंने शिक्षण प्राप्त करना क्यों छोड़ दिया?

7. सरकारी स्कूल कम हो रहे हैं और छात्र भी कम हो रहे हैं

सरकारी स्कूलों में शिक्षा इस हद तक खराब हो गयी है कि माता-पिता बच्चों को सरकारी स्कूलों में दाखिला दिलाने को तैयार नहीं हैं। उदाहरण के लिए, अहमदाबाद शहर में नगर निगम द्वारा संचालित स्कूलों में 32,000 बच्चों ने प्रवेश लिया था। जबकि 2012-13 में मुश्किल से 20,000 बच्चों ने दाखिला लिया था। अहमदाबाद की आबादी बढ़ी है लेकिन गरीबी नहीं घटी है तो भी नगर निगम के स्कूलों में बच्चों की संख्या घट रही है। इसका मतलब है कि गरीब लोगों को निजी स्कूलों में जाने के लिए मजबूर होना पड़ा।

8. बिना योग्यता वाले शिक्षक

निजी स्कूलों में पर्याप्त योग्यता वाले पूर्णकालिक शिक्षक होते ही नहीं हैं। जैसे अहमदाबाद जिला शिक्षा अधिकारी द्वारा 2012 में किए गए 12 निजी स्कूलों के सर्वेक्षण में यह पाया गया कि कक्षा 11-12 में कम व अतिथि शिक्षक बहुत अधिक होते हैं। इसके अलावा, उनके पास बी.एड. की डिग्री भी नहीं थी।

9. प्राथमिक शिक्षा सरकार की प्राथमिकता नहीं

प्राथमिक शिक्षा राज्य सरकार की प्राथमिकता में ही नहीं है। वर्ष 2005-06 में अहमदाबाद नगर निगम के 541 प्राथमिक विद्यालय थे। ये 2011-12 में घटकर 464 रह गए। उनमें पढ़ने वाले छात्रों की संख्या 1.87 लाख से घटकर 1.61 लाख रह गई। शिक्षकों की संख्या 4530 से घटकर 4005 रह गई। शहर की आबादी बढ़ी है लेकिन स्कूलों, शिक्षकों और छात्रों की संख्या घटी है। इस प्रकार, शहर के गरीबों को महंगे निजी स्कूलों में अपने बच्चों को भेजना पड़ा है।

10. शिक्षा का निजीकरण

शिक्षा के निजीकरण कितना हुआ है उसका सबूत अन्य तरीकों से भी मिलता है। अहमदाबाद में 2005-06 में पूर्व प्राथमिक स्कूल की कक्षाएं 110 थी। यह घटकर 2011-12 में 47 रह गई। उनके शिक्षकों की संख्या में उतनी ही कमी हुई है। इसमें छात्रों की संख्या 4,768 से घटकर 1,300 रह गई।

11. स्कूलों में बेंच नहीं हैं

अहमदाबाद नगर निगम द्वारा संचालित 464 स्कूलों में 1.60 लाख छात्र अध्ययन कर रहे हैं। उन्हें बैठने के लिए 22,000 बेंचों की जरूरत है लेकिन 15,000 बेंच ही हैं। दो साल पहले तो 5000 बेंच ही थी। इससे छात्रों को नीचे बैठकर और गोद में स्लेट या नोटबुक रखकर पढ़ना पड़ता है। और दूसरी तरफ नगर निगम के स्कूल बोर्ड ने 2011 - 12 में अपने 446 करोड़ रुपए के बजट में से 251 करोड़ रुपए का ही उपयोग किया।

स्वास्थ्य स्थिति और वंचितता

गुजरात में एनीमिया से पीड़ित बच्चों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है। 1998-99 में यह अनुपात 74.5 प्रतिशत था और 2005-06 में यह प्रतिशत 80.1 हो गया था। इस बारे में गुजरात राज्य आंध्र प्रदेश, असम, उड़ीसा, मेघालय, केरल और अरूणाचल प्रदेश से भी पीछे है। इसके अलावा, गर्भवती महिलाओं की स्थिति भी उतनी ही गंभीर है। गुजरात में 1998-99 में 47.4 प्रतिशत गर्भवती महिलाएं एनीमिया से ग्रस्त थी, और 2005-06 में उनका

अनुपात 60.6 प्रतिशत हो गया था। एनीमिया का अनुपात कम होने के बजाय बढ़ गया। इस बारे में गुजरात कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, मेघालय, उत्तर प्रदेश, पंजाब और केरल राज्य से काफी पीछे है। तथापि, केरल में 33.1 प्रतिशत गर्भवती महिलाएं एनीमिया से पीड़ित थी। यदि गर्भवती महिलाओं का ही अपर्याप्त पोषण हो तो वे जिन बच्चों को जन्म देती हैं स्वाभाविक है कि वे भी अपर्याप्त पोषण से पीड़ित हों।

स्वास्थ्य की स्थिति खराब होने का एक कारण यह है कि केंद्र सरकार की एकीकृत बाल विकास सेवा (आईसीडीएस) योजना को गुजरात में जितनी अच्छी तरह से लागू किया जाना चाहिए उस तरह से नहीं किया जाता। इस योजना के तहत भारत भर में आंगनबाड़ियां चलती हैं और 2006-07 से 2010-11 के दौरान कार्यान्वयन के बारे में कैग की रिपोर्ट में जो जानकारी दी गई है वह चौंकाने वाली हैं। जिन आठ राज्यों में 1 लाख से अधिक बच्चे गंभीर कुपोषण से पीड़ित हैं उनमें गुजरात शामिल है।

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण सं. 3 की रिपोर्ट के अनुसार जिन 19 राज्यों में सर्वेक्षण किया गया उनमें गुजरात 12 वें स्थान पर है। गुजरात उच्चतम शिशु मृत्यु दर वाले राज्यों में से एक है। इस सर्वेक्षण का कहना है कि तीन वर्ष से कम उम्र के 47 प्रतिशत बच्चों में जितना चाहिए उससे कम वजन है। 1992-93 के सर्वेक्षण की तुलना में स्थिति में केवल एक प्रतिशत का सुधार हुआ है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार दो वर्ष से कम उम्र के बच्चों को स्वाइन फ्लू होने की सबसे ज्यादा संभावना है। इसके बावजूद गुजरात के सरकारी अस्पतालों में बच्चों के लिए आवश्यक वेंटीलेटर और पोर्टेबल एक्स - रे मशीन भी नहीं है। 2009 में स्वाइन फ्लू दिखाई दिया, एक साल बाद वह फिर से दिखाई दिया। चार साल की अवधि के दौरान राज्य सरकार को स्वाइन फ्लू लड़ने के लिए बेहतर तैयार होना चाहिए था। गुजरात सरकार ने राज्य के उच्च न्यायालय को स्वाइन फ्लू के खिलाफ लड़ाई के लिए सरकार की तैयारी की जो जानकारी दी गई वह चौंकाने वाली है:

1. बनासकांठा और खेड़ा जिले में सरकारी अस्पतालों केवल दो-दो आइसोलेशन वार्ड थे, जहां स्वाइन फ्लू के मरीज को रखा जा सकता है। मेहसाणा और डांग में तीन वार्ड थे और आनंद, पंचमहल, पोरबंदर और साबरकांठा जिले में चार वार्ड थे।
2. बनासकांठा, आनंद, डांग जिले में वयस्कों के लिए एक - एक वेंटीलेटर है, जबकि मेहसाणा और पोरबंदर दो - दो हैं। खेड़ा और साबरकांठा में पांच-पांच वेंटीलेटर हैं, पोरबंदर जिले में जबकि बच्चों के लिए वेंटीलेटर बनासकांठा, खेडा, आणंद, पंचमहल जिले में हैं ही नहीं। केवल महेसाणा और डांग जिले में बच्चों के लिए वेंटीलेटर एक - एक है।
3. पोर्टेबल एक्स - रे मशीन की सुविधा, बनासकांठा, आणंद, साबरकांठा जिले में नहीं है, जबकि खेड़ा, मेहसाणा और डांग जिले में एक क एक मशीन है।
4. जो जिले स्वाइन फ्लू के मामलों में अधिक महत्वपूर्ण है वहां भी स्थिति ऐसी ही है। बच्चों के लिए एक भी वेंटीलेटर नहीं है, और केवल एक पोर्टेबल एक्स - रे मशीन है। वडोदरा और सूरत में केवल दो पोर्टेबल एक्स - रे मशीन हैं। सूरत में बच्चों के लिए दो और वयस्कों के लिए चार वेंटीलेटर हैं। दूसरी ओर, गांधीनगर में 12 आइसोलेशन वार्ड हैं और सूरत में 15 हैं। गांधीनगर और सूरत की आबादी की तुलना में सूरत में कितने वेंटीलेटर होने चाहिए उसकी कल्पना की जा सकती है।

प्रेस रिपोर्टों में यह बताया गया कि निजी अस्पताल स्वाइन फ्लू के रोगियों को भर्ती करने के लिए तैयार नहीं थे। क्योंकि उनके प्रबंधन का कहना था कि उनके पास स्वाइन फ्लू का इलाज करने के लिए आवश्यक सुविधाएं नहीं हैं। इससे न चाहते हुए भी स्वाइन फ्लू के मरीजों के सरकारी अस्पतालों में आना पड़ा। यदि सरकारी अस्पतालों में भी स्वाइन फ्लू के इलाज के लिए आवश्यक सुविधाएं न हों तो मरीज क्या करे।

राज्य के उच्च न्यायालय में गुजरात सरकार ने जो जानकारी प्रस्तुत की है उसे देखते स्वास्थ्य की स्थिति के बारे में आसानी से पता चल सकता है। आणंद, भरूच, जूनागढ़ और तापी जिले सरकारी अस्पतालों में एक चिकित्सक है। इसके अलावा, तापी,

आनंद और भरूच जिले के सरकारी अस्पतालों में बाल रोग विशेषज्ञ नहीं हैं। जूनागढ़, बनासकांठा, डांग, पोरबंदर, नवसारी और सुरेंद्रनगर जिले में केवल एक बाल चिकित्सक है। डांग और पोरबंदर में एक - एक नर्स है। बनासकांठा में 9 और जूनागढ़ में 6 नर्स हैं। तापी जिले में नर्स हैं, लेकिन एक भी डॉक्टर नहीं है। गुजरात सरकार ने जिस तरह बिना शिक्षकों के स्कूलों और कॉलेजों का निर्माण किया है, उसी तरह से बिना डॉक्टरों के अस्पतालों का निर्माण किया है।

गुजरात सरकार अपने बजट में स्वास्थ्य और परिवार कल्याण क्षेत्र में खर्च करती है। जब गुजरात में स्वास्थ्य विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों के पोषण की स्थिति बहुत खराब है तब सरकार सरकार स्वास्थ्य की स्थिति के बारे में किस तरह कितना खर्च करती है उसकी जांच करना महत्वपूर्ण बन जाता है। इस बारे में कुछ विवरण इस प्रकार हैं:

1. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण पर वर्ष 2009-10 में राज्य सरकार ने 290 करोड़ रुपये खर्च किए थे। अब सरकार ने 2013-14 में1756 करोड़ रुपये का अनुमानित खर्च रखा है। इस तरह पांच साल में लगभग साढ़े पांच गुना वृद्धि की गई है। यह बहुत बड़ी है। 2012-13 में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण के लिए 1,262 करोड़ रुपये का संशोधित अनुमान रखा गया है। इस प्रकार, पिछले साल से 40 प्रतिशत की बढ़ोतरी की गई है। यह प्रतीत हो रहा है कि सरकार लोगों के स्वास्थ्य में सुधार के लिए दृढ़ हो गई है।
2. दूसरी ओर, राज्य सरकार सामाजिक कल्याण और पोषण के शीर्ष के तहत स्वास्थ्य में सुधार के लिए खर्च कर रही है। वर्ष 2009-10 यह खर्च 116 करोड़ रुपये था। परंतु 2013-14 में 210 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान लगाया गया है। इस प्रकार, इसमें लगभग 60 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। हालांकि, 2012-13 के संशोधित अनुमान में खर्च 564 करोड़ रुपये होना है। इस दृष्टि से यह खर्च आधे से भी कम हो गया। इसका मतलब यह है कि ऊपर जो वृद्धि दिखती है उसमें काफी बढ़ोतरी की भरपाई कमी से होती है।
3. वर्ष 2005-06 में गुजरात में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 1072 और वर्ष 2011-12 में 1158 हो गई थी। इस प्रकार, सात साल में 86 की वृद्धि हुई है। हर साल राज्य की करीब 10 लाख आबादी बढ़ती है। 2005-06 में लगभग 5.5 करोड़ आबादी और तब प्रति 51,300 की आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र था। अब 2011-12 में छह करोड़ जनसंख्या होने पर प्रति 56,100 की आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र है। इस प्रकार, स्थिति सुधरने बजाय बिगड़ी है।
4. राज्य में सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की संख्या 2005-06 में 273 थी जो बढ़कर 2011-12 में हो 318 गई। इस प्रकार, लगभग 2.02 की आबादी पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र था, यह अब 2.04 लाख की आबादी पर एक है। इस तरह स्थिति को बदतर कहा जा सकता है। इसके अलावा, उप केन्द्रों की संख्या 7274 थी जो अब भी उतनी ही है, इसमें कोई बढ़ोतरी नहीं हुई। इस प्रकार, पहले 7561 की आबादी पर एक उप केंद्र था, और यह अब 8635 की आबादी पर एक उप केंद्र है। इस स्थिति को भी खराब कहा जा सकता है।
5. बच्चों के पोषण के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण कार्यक्रम मध्याह्न भोजन योजना है। वर्ष 2011-12 में इस योजना के लिए 528.53 करोड़ रुपये के व्यय का प्रावधान किया गया था और खर्च 472.55 करोड़ रुपए हुआ था। ऐसा लगता है अनुमान के मुकाबले लगभग 56 लाख रुपये कम खर्च हुए। रुपये के लिए 2012-13 में मध्यान्ह भोजन योजना पर खर्च के लिए 635.0 करोड़ रुपये खर्च करने का अनुमान रखा गया था। परंतु वर्ष के पहले नौ महीनों में मात्र 368.50 करोड़ रुपये ही खर्च हो पाए। छात्रों की संख्या में वृद्धि होने पर भी खर्च में कमी आई है?
6. वर्ष 2011-12 में 3.09 करोड़ मरीजों ने सरकारी अस्पतालों और स्वास्थ्य केंद्रों में बहिरंग मरीजों के रूप में इलाज कराया था। इस प्रकार, कहा जा सकता है कि राज्य के 50 प्रतिशत लोग सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ लेते हैं। राज्य में सभी लोगों एक साल में बीमार नहीं पड़ते, यदि पड़ते हैं ऐसा मानें तो बीमार पड़ने वाले लोगों में से काफी लोग सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ लेते हैं ऐसा कहा जा सकता है। तब इन सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार करना आवश्यक है।

7. गुजरात में कुल 50,226 में आंगनबाड़ी केन्द्र हैं। नवम्बर - 2012 तक 44.50 लाख लाभार्थियों को इन केन्द्रों द्वारा कवर किया जाना था लेकिन 91 फीसदी की सफलता के साथ 40.76 लोगों को कवर किया गया।

उपरोक्त तथ्यों से यह कहा जा सकता है कि जहां तक खर्च का संबंध है राज्य सरकार स्वास्थ्य के लिए खर्च बढ़ा रही है, परंतु ग्रामीण क्षेत्रों में यह खर्च जितना बढ़ना चाहिए उतना नहीं बढ़ रहा है।

पिछड़े क्षेत्रों का विकास

गुजरात को औद्योगिक रूप से विकसित राज्य माना जाता रहा है, लेकिन विकास के संदर्भ में गुजरात के कई क्षेत्र काफी पिछड़े हैं और उन विशेष ध्यान देने की जरूरत है। आम तौर पर बहुत लंबे समय तक गुजरात का विकास मेहसाणा - वापी की लगभग 400 किमी लंबी पट्टी तक सीमित रहा है जिसे स्वर्ण पट्टी (गोल्डन कॉरिडोर) के रूप में जाना जाता है। अब ऐसा दिखता है कि यह विकास लगभग 1600 कि.मी. लंबी तटीय पट्टी की ओर जा रहा है। इसे चांदी पट्टी (सिल्वर कॉरिडोर) के रूप में जाना जाता है।

सवाल यह है कि गुजरात के पिछड़े क्षेत्रों तक विकास पहुंचाने के लिए पिछले 10 साल की अवधि में गुजरात सरकार ने क्या किया। 1983 में, माधवसिंह सोलंकी सरकार ने राज्य के पिछड़े तालुकों की पहचान करने के लिए रिजर्व बैंक के पूर्व गवर्नर आइ.जी. पटेल की अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति की। उन्होंने तब के 56 तालुकों को पिछड़े तालुके माना था। 2005 के बाद राज्य सरकार ने पिछड़े तालुकों की पहचान करने के लिए वी. आर. एस. कौलगी की अध्यक्षता में एक समिति की नियुक्ति की। उन्होंने उन 56 तालुकों को पिछड़े क्षेत्रों को फिर से पिछड़ा माना। इसका मतलब यह हुआ कि तथाकथित विकास पिछड़े क्षेत्रों तक पहुंचा ही नहीं।

पिछड़े क्षेत्रों में राज्य के सभी जनजातीय क्षेत्र शामिल हैं। गुजरात में 16 प्रतिशत आदिवासी आबादी है। उनके विकास के लिए राज्य सरकार ने पर्याप्त ध्यान नहीं दिया। इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण एक पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि नामक केंद्रीय सरकारी योजना है जिसका गुजरात में अधूरे मन से अनुपालन हो रहा है। इस योजना को केंद्र सरकार ने पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए लागू किया है। इसमें गुजरात के पंचमहल, नर्मदा, दाहोद, साबरकांठा, बनासकांठा और डांग के छह आदिवासी जिले शामिल किए गए हैं। परियोजना के लिए केंद्र सरकार जो अनुदान देती है उसका भी गुजरात सरकार पूरा उपयोग नहीं करती।

केन्द्र सरकार ने वर्ष 2009-10 में बी.आर.जी.एफ. के तहत 91.17 करोड़ रुपए का अनुदान गुजरात सरकार को दिया था। लेकिन इस राशि में से के 83.01 करोड़ रु. अर्थात् 91.07 फीसदी का ही इस्तेमाल किया गया था। इसी प्रकार वर्ष 2010-11 में केंद्र सरकार ने इस योजना को लागू करने के लिए गुजरात सरकार को 101.31 करोड़ रुपये का अनुदान दिया था। लेकिन सरकार ने उसमें से 40.40 करोड़ रुपए ही खर्च किये थे, अर्थात् राज्य सरकार को मिले अनुदान में से केवल 39.88 प्रतिशत खर्च किया था। इसका मतलब स्पष्ट है कि राज्य सरकार आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए गंभीरता से प्रयत्न नहीं करती। जिलेवार स्थिति तो बहुत ही चौंकाने वाली है। वर्ष 2009-10 में साबरकांठा और डांग जिले को बी.आर.जी.एफ. के तहत आवंटित अनुदान का सौ का सौ प्रतिशत जिले में इस्तेमाल किया गया था। जबकि शेष चार जिलों में 95-95 प्रतिशत का इस्तेमाल किया गया था। अनुदान का सबसे कम 59.15 फीसदी इस्तेमाल दाहोद के लिए किया गया था।

2010-11 में तो स्थिति काफी बिगड़ गई। इस वर्ष केंद्रीय सरकार की ओर से मिले अनुदान का उपयोग अलग-अलग जिले में 15 से 68 प्रतिशत केबीच रहा था। दाहोद जिले में अनुदान का सबसे कम उपयोग केवल 14.65 प्रतिशत ही हुआ। केंद्रीय सरकार ने दाहोद जिले के लिए इस वर्ष 12.90 करोड़ रुपए दिए थे लेकिन राज्य सरकार ने इसमें से केवल 1.89 करोड़ रुपये ही खर्च किए।

बी.आर.जी.एफ. योजना के तहत देश के 250 पिछड़े जिलों को

विकसित करने के लिए राज्यों को अनुदान दिया जाता है। उनमें से छह जिले गुजरात के हैं। प्रत्येक जिले में हर साल कम से कम 10 करोड़ रुपये का अनुदान देना उसका मानक है। अर्थात् छह जिलों में 60 करोड़ रुपये के बजाय केंद्र सरकार ने वर्ष 2009-10 में 91 करोड़ रुपये और वर्ष 2010-11 में 101 करोड़ रुपये उपलब्ध कराए थे। फिर भी, सरकार पिछड़े आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए धन का इस्तेमाल करने में विफल रही।

अनुसूचित जातियों का विकास

गुजरात में अनुसूचित जाति की आबादी सात प्रतिशत से अधिक है। उनके विकास की स्थिति पर गंभीरता से विचार करना चाहिए। राज्य उनके सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कल्याण के लिए जो प्रयत्न करता है वह उसका अपने संवैधानिक कर्तव्य है। गुजरात सरकार ने अनुसूचित जातियों के कल्याण की योजनाओं को जिस तरह से लागू किया है उससे पता चलता है कि वह कितनी गंभीर है।

गुजरात की 2007-12 की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जातियों के विकास की परियोजनाओं में जो अनुमानित खर्च था उसकी तुलना में काफी कम खर्च किया गया। जैसे कि शिक्षा क्षेत्र में अनुसूचित जाति के बच्चों और छात्रों के विकास के लिए कुल 29 परियोजनाओं को लागू करने के लिए रखा गया था। इनमें से 18 परियोजनाओं में अनुमान से भी कम खर्च किया गया है। कुल 557 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान पेश किया गया था। यदि भावों में वृद्धि को ध्यान में लें तो अनुमान से बहुत अधिक खर्च करना चाहिए था।

इसी तरह अनुसूचित जातियों के आर्थिक विकास के लिए राज्य सरकार द्वारा कुल 10 योजनाओं को लागू किया गया है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना तैयार की जा रही थी तब 140 करोड़ खर्च का अनुमान लगाया गया था। लेकिन राज्य सरकार ने केवल 78 करोड़ रुपये ही खर्च किए हैं। इसके अलावा, गुजरात के अनुसूचित जाति आर्थिक विकास निगम के लिए 58.60 करोड़ रुपये खर्च का अनुमान लगाया गया था जिसमें से केवल 17.88 करोड़ रुपये ही खर्च हुए। गुजरात सफाई कामदार विकास बोर्ड के लिए वर्ष 2012-13 के लिए किसी नई योजना पर विचार नहीं किया गया है और उसके लिए बजट में भी कोई प्रावधान नहीं किया गया था। इसके अलावा, उत्पादन के केन्द्रों के लिये 1 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान लगाया गया था लेकिन केवल 43 लाख रुपये ही खर्च हुए। इसी तरह, स्वास्थ्य, आवास और अन्य परियोजनाओं के लिए 250 करोड़ रुपये के खर्च का का अनुमान लगाया गया था जबकि वास्तविक खर्च 229 करोड़ रुपये ही हुए। जैसे मुफ्त चिकित्सा सहायता के लिए 8 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान लगाया गया था और खर्च 2.68 करोड़ रुपये ही हुए। कुंवरबाई ना मामेरा की योजना के लिए 40 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया था लेकिन खर्च 8.10 करोड़ रुपये ही हुए। इसी तरह शहरी क्षेत्रों में आवास के लिए वित्तीय सहायता के लिए 6 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान पेश किया गया था। लेकिन तथ्य यह है कि 1 करोड़ से भी कम राशि खर्च की गई थी। भीमाबाई अम्बेडकर बालवाड़ी योजना के लिए 15 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान लगाया गया था लेकिन केवल 4 करोड़ रुपये ही खर्च हुए।

अनुसूचित जातियों के विकास के लिए प्रशासन और निर्देशन शीर्ष के तहत भी खर्च किया जाता है। इसमें भी 8 शीर्ष के तहत खर्च किया जाता है। इसमें मुख्य रूप से कर्मियों की भर्ती शामिल है, और इसमें अनुमान से लगभग 11 करोड़ रुपये कम खर्च हुए हैं।

अनुसूचित जातियों के समग्र कल्याण के लिए गरीबलक्ष्यी कार्यक्रम के तहत चार अन्य परियोजनाओं के लिए खर्च होता है। इसमें परीक्षितलाल मजूमदार पूर्व एस.एस.सी. छात्रवृत्ति, सूबेदार रामजी अम्बेडकर छात्रावास, छोटे व्यवसायियों को व्यवसाय स्थल खरीदने के लिए सहायता और निःशुल्क चिकित्सा सहायता शामिल हैं। इन सभी चार कार्यक्रमों के लिए ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में कुल 48 करोड़ रुपये खर्च का प्रावधान किया गया था, लेकिन इसमें से केवल 11.20 करोड़ रुपये का खर्च हुआ था। इसके अलावा, सफाई कर्मचारियों की पुनर्वास योजना के लिए 160.30 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान लगाया गया था, लेकिन 102.05

करोड़ रुपये ही खर्च हुए थे। इस तरह, 2007-12 की 11 वीं पंचवर्षीय योजना में अनुसूचित जातियों के विकास के लिए कुल 1200.37 करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान पेश किया गया था। लेकिन उसके सामने 1026.77 करोड़ रुपये ही खर्च हुए थे। जब योजना बनी थी तब 2006-07 की कीमतों को ध्यान में लिया गया था। उसके बाद कीमतों और आबादी में वृद्धि को ध्यान में रखा जाए तो अनुमान से काफी अधिक खर्च होना चाहिए था, लेकिन वास्तव में करीब 175 करोड़ रुपये कम खर्च हुए थे।

इसके अलावा, दूसरी तरफ एक उल्लेखनीय बात है। गुजरात पंचायत अधिनियम -1993 के अनुसार जिला पंचायत, तालुका पंचायत और ग्राम पंचायत स्तर पर अनुसूचित जातियों सहित गरीब वर्गों के कल्याण के लिए सामाजिक न्याय समितियों का गठन करना अनिवार्य है। राज्य सरकार को इन समितियों को बिना सशर्त अनुदान देना चाहिए इस सिफारिश को राज्य सरकार ने लागू किया ही नहीं और इसलिए ये समितियां लगभग एक शोभा की वस्तु बन कर रह गई हैं। कई ग्राम पंचायतों में तो सामाजिक न्याय समितियों का गठन ही नहीं किया गया है।

सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का क्रियान्वयन

केन्द्र सरकार की दो प्रमुख सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का क्रियान्वयन गुजरात में जिस तरह से हो रहा है वह जानने जैसा है। गरीब वृद्धों को पेंशन देने के लिए और गरीब गर्भवती महिलाओं को सहायता प्रदान करने के लिए योजनाओं में गुजरात कितना पीछे वह यहां दिए गए विवरण से समझा जा सकता है।

1. राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना

देश के बेसहारा बुजुर्गों को बुनियादी जरूरतों के लिए राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना सबसे पहली और अब तक की सबसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय स्तर की योजना है। दूसरे दृष्टिकोण से देखें तो सीमित रूप में भी यह एकमात्र राष्ट्रीय योजना है जिसमें असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों के लिए पेंशन का प्रावधान है। यह योजना 1995 में शुरू की गयी थी। उस समय पेंशनभोगी को प्रति माह 75 रु. पेंशन देना निर्धारित किया गया था। इस समय प्रत्येक पेंशनर को प्रति माह 400 रु. पेंशन मिलती है। इसमें 200 रु. केन्द्र सरकार और 200 रु. गुजरात सरकार देती है।

1998 में राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना के तहत 1993-94 के गरीबी के अनुमान के आधार पर सांख्यिकीय सीमा तय की गई थी। गुजरात में 2003-04 में इस योजना के तहत 2,21,600 लोगों को कवर करने का आंकड़ा केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित किया गया था। लेकिन केवल 1673 लोगों को ही राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना का लाभ मिला था। इस तरह गुजरात सरकार ने इस योजना का लाभ पौणा प्रतिशत को ही दिया था।

इस योजना के लिए पात्रता के 3 (तीन) मानक तय किए गए थेः 1. गरीबी रेखा से नीचे जीने वाले (बीपीएल), (2) निराधारता, (3) 65 वर्ष से अधिक की आयु। इस तरह बहुत गरीब लोगों को पेंशन मिलती है और उसे देने में गुजरात सरकार वर्ष 2003-04 में विफल रही थी। इसके बाद भी यह सिलसिला जारी रहा था। 2006-07 में 3.29 लाख लोगों को इस परियोजना का लाभ मिलना चाहिए था परंतु गुजरात सरकार ने केवल 40,117 बुजुर्गों को ही पेंशन दी थी। यानि कि केवल 12.2 प्रतिशत लोगों को ही इस योजना का लाभ मिला था।

इस संदर्भ में निम्नलिखित मुद्दे महत्वपूर्ण हैं

1. सुप्रीम कोर्ट ने 28-11-2001 को सभी राज्य सरकारों को राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजनाओं के कार्यान्वयन के लिए 01/01/2002 तक लाभार्थियों की पहचान करने के लिए कहा था। इसके बावजूद गुजरात सरकार इतने कम लाभार्थियों की पहचान कर पाई।
2. सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त आयुक्तों ने अगस्त-2004 में इस योजना के कार्यान्वयन पर जो पांचवीं रिपोर्ट अदालत में प्रस्तुत की थी उसमें 18 राज्यों का विवरण था। उसके अनुसार जैसा कि गुजरात इस मामले में 17 वें स्थान पर है। असम इस योजना के क्रियान्वयन के संबंध में गुजरात से पीछे है।

3. सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त आयुक्तों ने सुप्रीम कोर्ट में जो सातवीं रिपोर्ट प्रस्तुत की है उसमें दिए गए विवरण के अनुसार, 2006-07 में इस योजना के क्रियान्वयन के बारे में सभी राज्यों में सबसे पीछे है। इस रिपोर्ट के अनुसार यदि गरीबी का स्तर 36 प्रतिशत माना जाए तो गुजरात में केवल 3.1 प्रतिशत गरीब और बेसहारा बुजुर्गों को इस योजना के तहत पेंशन मिली है। देश के सभी राज्यों में यह प्रतिशत 20 से 100 के बीच है।

2. राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना और जननी सुरक्षा योजना

राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम के हिस्से के रूप में 1995 में राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना शुरू की गयी थी। इस योजना के तहत बीपीएल परिवारों की गर्भवती महिलाओं को गर्भावस्था से 8 से 12 सप्ताह पहले दो बच्चों के जिंदा पैदा होने पर 500 रु. की एकमुश्त मदद दी जाती है। यह योजना पूरी तरह से केंद्र द्वारा प्रायोजित योजना है। अर्थात् केंद्र सरकार उसका सब खर्च उठाती है। इस योजना में सुधार किया गया और 04/12/2005 इसे जननी सुरक्षा योजना नाम दिया गया। इसका उद्देश्य मातृ मृत्यु दर और शिशु मृत्यु दर घटाना है इसके लिए अस्पतालों में प्रसूति कराने की कोशिश की जा रही हैं। सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त आयुक्तों की रिपोर्ट के बाद भारत सरकार ने निम्नलिखित निर्णय किए थेः

1. जननी सुरक्षा के तहत बीपीएल की गर्भवती महिलाओं को 500 रु. की नकद सहायता दी जाएगी भले ही प्रसूति किसी भी जगह हुई हो और उसकी जांच होने के बाद ही मदद दी जाएगी ऐसी शर्त नहीं रखी जाएगी।
2. अस्पतालों में प्रसूति कराने वाली गर्भवती महिलाओं को अधिक राशि का भुगतान किया जाएगा।
3. इस योजना के तहत जिन राज्यों में खराब प्रदर्शन हुआ है, वहां राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के तहत, आयु सीमा और बच्चों की संख्या की सीमा को हटा दिया गया है। क्लीनिक में प्रसूति के लिए बीपीएल की सीमा भी हटा दी गयी है।
4. सुप्रीम कोर्ट द्वारा नियुक्त आयुक्तों की सातवीं रिपोर्ट के अनुसार 2006-07 में गुजरात में राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना के तहत पात्र महिलाओं की संख्या 2,12,845 और उसमें से केवल 42,373 महिलाओं को ही जननी सुरक्षा योजना का लाभ दिया गया। इस प्रकार, केवल 20 फीसदी महिलाओं को ही इस योजना से लाभान्वित किया गया था। गुजरात इस संबंध में देश में 17 वें स्थान पर है।
5. जननी सुरक्षा योजना के तहत पैसे के उपयोग के संबंध में गुजरात काफी पीछे है। 2006-07 में गुजरात को केंद्र सरकार से 8.52 करोड़ रुपये आवंटित किए गए थे, और उसमें से केवल 1.86 करोड़ रुपये यानी 21.8 फीसदी रुपये का ही खर्च गुजरात सरकार द्वारा किया गया था। यह इस संबंध में 22 वें स्थान पर है। देश के 13 राज्य और संघ शासित प्रदेश ऐसे हैं जिन्होंने हर वर्ष उन्हें आवंटित राशि से 50 प्रतिशत से अधिक पैसा खर्च किया था।
6. उपरोक्त रिपोर्ट में ऐसी सिफारिश की गई थी कि राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना और जननी सुरक्षा योजना की जानकारी को पंचायत भवनों, आंगनबाड़ी केन्द्रों, सार्वजनिक स्वास्थ्य केन्द्रों और उप केंद्रों और तालुका और जिला अस्पतालों में लगाया जाना चाहिए। इसके अलावा, हर तीन महीने में पंचायत भवन और आंगनवाड़ी केन्द्रों पर चयनित व अचयनित आवेदकों की नवीनतम सूची लगानी चाहिए। स्पष्ट है कि इस सिफारिश को भी गुजरात में लागू नहीं किया गया।

संदर्भः

(1) 'भारतीय मानव विकास रिपोर्ट -2011' योजना आयोग, भारत सरकार।
(2) 'राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट -2001', योजना आयोग, भारत सरकार।
(3) प्राथमिक शिक्षा - गुजरात, प्राथमिक शिक्षा विभाग, 2011, गुजरात सरकार।
(4) 11वीं पंचवर्षीय योजना, योजना आयोग, भारत सरकार।
(5) www.nrega.nic.in
(6) भोजन का अधिकार - 2007, ह्यूमन लॉ नेटवर्क, नई दिल्ली।

मानव विकास रिपोर्ट - 2013

प्रस्तावना

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा मानव विकास रिपोर्ट 1990 से प्रकाशित की जाती है। विशेष रूप से 1945 के बाद, नव स्वतंत्र विकासशील देशों के लिए विकास एक नया मंत्र बन गया है। इन देशों में आर्थिक विकास तो हुआ, लेकिन भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाएं अधिकांश लोगों को प्राप्त करने में की कमी रह गई। 1950-80 के दौरान भारत की औसत आर्थिक वृद्धि दर 3.3 प्रतिशत थी। 1980-2000 की अवधि के दौरान भारत की औसत आर्थिक विकास दर 5.5 प्रतिशत थी जबकि 2000-10 के दौरान औसत आर्थिक विकास दर 7.5 प्रतिशत के आसपास रही थी। इस प्रकार, आर्थिक वृद्धि दर दोगुनी से अधिक हो गई है। फिर भी गरीबी और बेरोजगारी भी निरपेक्ष रूप से बढ़ गयी है। एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिकी देशों में भी लगभग इसी तरह की स्थिति उत्पन्न हो गई है। तभी मानव विकास की अवधारणा विकास की परंपरागत अवधारणा के विकल्प के रूप में पैदा हुई। इसलिए, 1990 के बाद से, संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम द्वारा रिपोर्ट प्रकाशित की जाती है। मानव विकास रिपोर्ट - 2013 हाल ही में प्रकाशित की गई है। उसमें मानव विकास सूचकांकों का विवरण और उसके आधार पर पर 187 देशों को रैंकिंग दी गई है। इसके अलावा, 132 देशों के लिए असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक, और 147 देशों के लिए महिला - पुरुष असमानता सूचकांक दिया गया है। इसके अलावा, एक बहु - आयामी गरीबी सूचकांक 104 देशों के लिए दिया गया है। हालांकि, पिछली रिपोर्टों के संदर्भ में मानव विकास सूचकांक और देशों की रैंकिंग की तुलना करना कठिन और भ्रामक हैं क्योंकि उसके लिए सूचना और तरीकों को बदल दिया है।

उपरोक्त मुद्दे को ध्यान में रखकर भारत में मानव विकास की जो स्थिति है उसकी जानकारी तालिका 1 में दी गई है। भारत में

तालिका १: भारत में मानव विकास

वर्ष	आयु (वर्ष)	शाला शिक्षा के अपेक्षित वर्ष	शाला शिक्षा के औसत वर्ष	प्रति व्यक्ति आय (2005-पीपीपी डोलर)	मानव विकास सूचकांक
1980	55.3	6.3	1.9	880	0.345
1985	57.0	7.1	2.4	1,007	0.379
1990	58.3	7.4	3.0	1,191	0.410
1995	59.8	8.2	3.3	1,389	0.463
2000	61.6	8.3	3.6	1,702	0.438
2005	63.3	9.9	4.0	2,190	0.507
2010	65.1	10.7	4.4	3,009	0.547
2011	65.4	10.7	4.4	3,175	0.551
2012	65.8	10.7	4.4	3,285	0.554

तालिका २: असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक

देश/ प्रदेश	असमानता-आधारित मानव विकास सूचकांक	आयु में असमानता के कारण नुकसान (प्रतिशत)	शिक्षा में असमानता के कारण नुकसान (प्रतिशत)	आय में असमानता के कारण नुकसान (प्रतिशत)
भारत	0.392	27.1	42.4	15.8
बांग्लादेश	0.374	23.2	39.4	17.7
पाकिस्तान	0.356	32.3	45.2	11.0
दक्षिण एशिया	0.395	27.0	42.0	15.9

तालिका ३: स्त्री-पुरुष आधारित असमानता सूचकांक

देश/प्रदेश	सूचकांक	क्रमांक	मातृत्व मृत्यु	किशोरियों में प्रजनन दर	संसद में महिलाएं (प्रतिशत)
भारत	0.610	132	200	74.7	10.9
बांग्लादेश	0.158	111	240	68.2	19.7
पाकिस्तान	0.567	123	260	28.1	21.1
दक्षिण एशिया	0568	-	203	66.9	18.5

मध्यम मानव विकास हुआ है क्योंकि भारत का मानव विकास सूचकांक 0.554 है। इस अर्थ में, 187 देशों में भारत 136 वें स्थान पर है। हालांकि, 1980 और 2012 के दौरान भारत का मानव विकास सूचकांक बढ़ता रहा है जिसे इस तालिका में देखा जा सकता है। यह विवरण यह दर्शाता है कि मानव विकास सूचकांक में 31 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। 2011 में, भारत 134 वें स्थान पर था।

तालिका 1 में दिए गए विवरण से पता चलता है कि 1980 से 2012 के दौरान के संबंध में औसत आयु में लगातार वृद्धि हुई है। आयु में 10.5 साल की वृद्धि हुई! शाला शिक्षा के अपेक्षित वर्षों में 4.4 वर्ष की वृद्धि हुई है और शाला शिक्षा के औसत वर्षों में 2.5 साल की वृद्धि हुई। 1980 में प्रति व्यक्ति आय 880 अमेरिकी डॉलर थी और 2012 में 3,285 थी। इस प्रकार, इसमें 273 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी।

मानव विकास सूचकांक की गणना के लिए इन मुद्दों को ध्यान में रखा जाता है:

1. लंबा और स्वस्थ जीवनः इसमें आयु को ध्यान में रखा जाता है। इसका मतलब यह है कि नवजात शिशु के जन्म के समय जो मृत्यु दर प्रचलित है उस पर वह जितने वर्ष जीए वह।
2. ज्ञानः इसमें शाला शिक्षा के औसत साल, यानि 25 वर्ष या अधिक आयु के लोगों द्वारा प्राप्त शिक्षा के औसत वर्ष। शाला शिक्षा के वर्षों का मतलब है कि बच्चे के स्कूल में प्रवेश करने के बाद जितने वर्ष अध्ययन करे उसकी अपेक्षा।
3. प्रति व्यक्ति आय अर्थात् सकल राष्ट्रीय को जनसंख्या से विभाजित।

असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक

मानव विकास रिपोर्ट -2010 से असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक की गणना की शुरुआत हुई है। इसमें मानव

तालिका ४: स्त्री - पुरुष असमानता

देश/प्रदेश	माध्यमिक शिक्षा (प्रतिशत)		श्रम बाजार में भागीदार (प्रतिशत)	
	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष
भारत	26.6	50.4	29.0	80.7
बांग्लादेश	30.8	39.3	57.2	84.3
पाकिस्तान	18.3	43.1	22.7	83.3
दक्षिण एशिया	28.3	49.7	31.3	81.0

तालिका ५: बहु - आयामी गरीबी सूचकांक

देश	सर्वेक्षण वर्ष	सूचकांक	कुल आबादी में गरीब आबादी का (प्रतिशत)	तीव्र गरीबी प्रतिशत	गरीबी रेखा से नीचे की आय	वंचितता की तीव्रता (प्रतिशत)
भारत	2005-06	0.283	53.7	28.6	32.7	52.7
बांग्लादेश	2007	0.292	57.8	26.2	43.3	50.4
पाकिस्तान	2006-07	0.264	49.4	27.4	21.0	53.4

विकास सूचकांक में जिन पहलुओं को ध्यान में लिया जाता है उसमें देश में कितनी असमानता मौजूद है उसकी गणना की जाती है। इसका मतलब यह है कि या असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक में देश का औसत मानव विकास कितना है उसे ध्यान में नहीं लिया जाता लेकिन मानव विकास देश की विभिन्न श्रेणियों के बीच कितना पहुंचा है उस पर ध्यान दिया जाता है। यही कारण है कि समाज में हर व्यक्ति का एक मानव विकास सूचकांक हो सकता है। यदि किसी देश में मानव विकास के सभी पहलुओं के बारे में सब लोगों की स्थिति एक जैसी ही हो तो सभी व्यक्तियों का व्यक्तिगत मानव विकास सूचकांक एक जैसा ही आएगा। लेकिन सब की स्थिति एक जैसी तो होती नहीं है। इसलिए मानव विकास की बात समाज में असमान रूप से वितरित रहती है। इस प्रकार, मानव विकास सूचकांक और असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक के बीच के अंतर से मानव विकास में जो क्षति पहुंचती है उसे मापता है।

इस सूचकांक में भी जो देश 1.000 के जितना करीब होता है और मानव विकास के मामले में असमानता कम कही जाती है। भारत में असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक - 2011 की रिपोर्ट में 0.392 था, और 2013 की रिपोर्ट में भी यह अपरिवर्तित है। भारत का मानव विकास सूचकांक 0.554 है। यह कहा जा सकता है कि भारत में मानव विकास असमान रूप से हुआ है, क्योंकि दोनों सूचकांकों के बीच 0.162 का अंतर स्पष्ट नजर आता है।

तालिका 2 में असमानता - आधारित मानव विकास सूचकांक के विवरण दिए गए हैं। भारत की स्थिति बांग्लादेश और पाकिस्तान की तुलना में थोड़ी बेहतर है और भारत पूरे दक्षिण एशिया के औसत के करीब है। हालांकि, इस तालिका से यह निष्कर्ष निकलता है कि भारत में मानव विकास में आयु के कारण जो नुकसान होता है उससे अधिक नुकसान शिक्षा के कारण होता है

और आय के कारण सबसे कम क्षति हुई है। इसका स्पष्ट रूप से यह मतलब है कि भारत में आय और स्वास्थ्य की असमानताएं कम हैं और शिक्षा के संदर्भ में असमानता अधिक है। लगभग वही स्थिति बांग्लादेश और पाकिस्तान में भी पायी जाती है। हालांकि पिछले दशक के दौरान भारत, बांग्लादेश और पाकिस्तान तीनों में आर्थिक विकास दर विकसित देशों की तुलना में अधिक होने के बावजूद असमानता बढ़ी है वह इससे साबित होता है।

स्त्री - पुरुष असमानता सूचकांक

महिलाओं और पुरुषों के बीच असमानता मानव विकास में एक महत्वपूर्ण बाधा है। 1995 से मानव विकास रिपोर्ट में महिलाओं के विकास का माप निकालने के लिए और महिला विकास सूचकांक और महिला सशक्तिकरण माप दो सूचकांक विकसित किये गये थे। की 2010 के मानव विकास रिपोर्ट से महिला - पुरुष असमानता सूचकांक (जी आई आई) गिनने की शुरुआत हुई है। महिला पुरुष असमानता सूचकांक तीन मुख्य पहलुओं पर विचार किया गया है:

1. प्रजननलक्ष्यी स्वास्थ्य।
2. सशक्तिकरण।
3. श्रम बाजार।

यहां यह ध्यान में रखा है कि राजनीतिक और आर्थिक दोनों के संदर्भ में महिलाओं का कितन सशक्तिकरण हुआ है। यह सूचकांक समग्र तौर पर यह दर्शाता है कि समाज में महिलाओं की स्थिति कैसी है, आर्थिक विकास होता है तो उसका लाभ उन्हें मिलता है या नहीं। उपरोक्त तीन पहलुओं के आधार पर, इस सूचकांक की गणना के लिए निम्न आठ संकेतकों को ध्यान में लिया गया है:

1. मातृ मृत्यु दर।
2. किशोरियों में प्रजनन दर।
3. संसद में सीटों का प्रतिशत।
4. 25 वर्षों से अधिक उम्र के स्त्री- पुरुषों में माध्यमिक शिक्षा का प्रतिशत।
5. स्त्री- पुरुषों का श्रम बाजार भागीदारी का प्रतिशत।
6. 15 से 49 आयु की महिलाओं में गर्भनिरोधक का उपयोग (प्रतिशत)।
7. बच्चे के जन्म के बाद एक बार अस्पताल जाना।
8. कुशल स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा बच्चे का जन्म।

तालिका 3 और तालिका 4 में इस सूचकांक के बारे में जो स्थिति है उसके बारे में जानकारी दी गई है। महिला - पुरुष असमानता की दृष्टि से भारत की स्थिति पाकिस्तान और बांग्लादेश के मुकाबले और पूरे दक्षिण एशिया के औसत से भी बदतर है। मानव विकास सूचकांक के मामले में भारत 134वें स्थान पर है लेकिन महिला - पुरुष असमानता सूचकांक में भारत 132वें स्थान पर है।

लेकिन पाकिस्तान और बांग्लादेश काफी आगे हैं। संसद में महिलाओं का सबसे कम अनुपात भारत में है, जबकि पाकिस्तान में किशोरियों में बहुत कम प्रजनन दर है वह भारत में बहुत अधिक है। पाकिस्तान के मातृ मृत्यु दर उच्चतम है। इसके अलावा, माध्यमिक शिक्षा और महिलाओं के श्रम बाजार भागीदारी के संदर्भ में पाकिस्तान काफी पीछे है उसे इस तालिका से देखा जा सकता है।

बहु - आयामी गरीबी सूचकांक

मानव विकास रिपोर्ट 2010 के अनुसार, मानव गरीबी सूचकांक क 1 और मानव गरीबी सूचकांक -2 (एच.पी.आइ. 1 और एच.पी.आइ. 2) के स्थान पर बहु-आयामी गरीबी सूचकांक (एम.पी.आइ.) की गणना करना शुरू कर दिया। मानव गरीबी सूचकांक -1 और मानव गरीबी सूचकांक-2 को गरीबी की गणना के लिए आय और अभाव मापदंड को ध्यान में लिया गया था। इसमें विकासशील देशों और विकसित देशों के रूप में विभाजित किया गया था। बहु - आयामी गरीबी सूचकांक भी लगभग वही मापदंड अपनाता है परंतु संकेतक बदल गए हैं और उनकी संख्या में वृद्धि हुई है।

बहु-आयामी गरीबी सूचकांक की गणना के लिए तीन क्षेत्रों के कुल 10 संकेतक इस प्रकार हैं:

शेष पृष्ठ 32 पर

भारत में सामाजिक सुरक्षा बजटः एक मूल्यांकन

1991 में, भारत में नए आर्थिक सुधारों के बाद कई आर्थिक क्षेत्रों में सरकार पीछे हटने लगी है। इसके परिणाम स्वरूप, विशेष रूप से असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों और कर्मचारियों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रश्न विशेष मात्रा में उठने लगे। वास्तव में, संगठित क्षेत्र की तुलना में असंगठित क्षेत्र में लोगों की संख्या अधिक मात्रा में बढ़ रही है अतः उनकी सामाजिक सुरक्षा के लिए कदम उठाना राज्य सरकारों और केन्द्र सरकार के लिए आवश्यक है। इस मामले में, भारत सरकार ने अपने बजट में सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के लिए जितना खर्च करती है वह जानना दिलचस्प होगा। इस लेख में **श्री रवि दुग्गल** ने बजट में सामाजिक सुरक्षा के प्रावधानों का विशद विश्लेषण किया है।

प्रस्तावना

परिपक्व कल्याणकारी राज्य का प्रमाणपत्र यानि सामाजिक सुरक्षा। यूरोप के सामाजिक लोकतांत्रिक देशों के तरह मजबूत कल्याणकारी राज्य अपने सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 25 फीसदी (वर्ष 2005 में) सामाजिक सुरक्षा पर खर्च करते हैं। दुनिया भर में सकल घरेलू उत्पाद का औसतन 8.30 फीसदी सामाजिक सुरक्षा पर खर्च किया जाता है और के 2.67 प्रतिशत स्वास्थ्य देखभाल पर खर्च किया जाता है। भारत में यह प्रतिशत 4.05 (स्वास्थ्य देखभाल के लिए 0.95 फीसदी), जबकि दक्षिण अफ्रीका, ब्राजील और रूस में 12 से 13 प्रतिशत (स्वास्थ्य देखभाल के लिए 3 प्रतिशत से 4 प्रतिशत) और स्वीडन में 29.40 फीसदी (स्वास्थ्य देखभाल के लिए 6.8 फीसदी) खर्च किया जाता है।

सामाजिक सुरक्षा का मतलब

सामाजिक सुरक्षा क्या है? अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आइ.एल.ओ.) परिभाषा की परिभाषा निम्नानुसार हैः 'सामाजिक सुरक्षा की जिस अवधारणा को स्वीकार किया गया है, उसमें अन्य सभी चीजों के साथ नकदी या वस्तु नीचे की बातों से सुरक्षा प्रदान करने के लिए लाभ प्रदान करने के लिए सभी कदमों को कवर किया जाता हैः

(1) बीमारी, विकलांगता, प्रसूति, रोजगार से लगी चोट, बेरोजगारी, बुढ़ापा या परिवार के सदस्य की मौत के कारण कार्य से संबंधित आय का अभाव या अपर्याप्त आय।

(2) स्वास्थ्य देखभाल का अभाव या वहन करने योग्य नहीं मिले।

(3) विशेष रूप से बच्चों और वयस्क आश्रितों के लिए परिवार का अपर्याप्त समर्थन है।

(4) सामान्य गरीबी और सामाजिक बहिष्कार।

इस तरह सामाजिक सुरक्षा के दो पहलू हैः, आय की सुरक्षा और चिकित्सा देखभाल की प्रप्ति। आइ.एल.ओ. की आय सुरक्षा सिफारिश-1944 (संख्या 67), और चिकित्सा देखभाल सिफारिश-1944 (संख्या 69) दोनों को सामाजिक सुरक्षा के आवश्यक तत्वों के रूप में का उल्लेख किया गया है। आइ.एल.ओ. के अनुसार अन्य सामाजिक व्यवस्थाओं से निम्नलिखित तरीके से सामाजिक सुरक्षा अलग पड़ती हैः

(1) किसी भी तरह के प्रतिफल के दायित्व के बिना लाभार्थियों को लाभ प्रदान किया जाता है। काम के बदले में या अन्य सेवाओं के बदले में मुआवजाके रूप में जो प्रदान किया जाता है वह सामाजिक सुरक्षा नहीं है।

(2) सामाजिक सुरक्षा लाभ दाता और संरक्षित व्यक्ति के बीच व्यक्तिगत समझौते पर आधारित नहीं हैं। उदाहरण के लिए, जीवन बीमा का अनुबंध। लेकिन यह लोगों के व्यापक समूह को लागू पड़ता है और इसलिए सामाजिक सुरक्षा का रूप सामूहिक होता है।

भारत में आबादी की विभिन्न श्रेणियों के लिए सामाजिक सुरक्षा उपाय उपलब्ध हैं, लेकिन ओईसीडी के सदस्य देशों में या अन्य देशों में इसके विपरीत भारत में उसका ढांचा कमजोर है। उसका

तालिका १: सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक कल्याण के लिए राज्य सरकारों और केंद्र सरकार का खर्च (रु. करोड़ में)

सामाजिक सुरक्षा योजना	1990-91	2000-01	2005-06	2009-10	2011-12
1. सरकारी कर्मचारियों को पेंशन और सेवानिवृत्ति लाभ	5,182	38,819	60,871	1,39,551	1,71,659
2. सामाजिक सहायता, सामाजिक कल्याण, पोषण और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन जाति कल्याण	3,883	15,007	27,100	83,791	1,03,064
3. प्राकृतिक आपदा राहत	867	3,717	7,980	7,972	7,687
4. श्रम कल्याण	732	2,079	2,918	5,493	8,109
5. आवास	766	4,156	6,301	17,536	23,714
6. स्वास्थ्य और डब्ल्यू.एस.एस.	7,496	27,187	45,486	89,038	1,18,296
कुल	18,929	90,965	1,50,656	3,43,381	4,32,530
सकल घरेलू उत्पाद का प्रतिशत	3.23	4.19	4.08	5.32	4.82
सरकारी कर्मचारियों की पेंशन (सकल घरेलू उत्पाद का प्रतिशत)	0.88	1.79	1.65	2.16	1.91

संगठनात्मक रूप से कमजोर है। स्पष्ट संवैधानिक आदेशों के बावजूद ऐसा हुआ है। इसके अलावा, आइसीईसीआर द्वारा धारा-9 और धारा-12 में भी सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य के अधिकार को स्पष्ट किया गया है।

धारा -9

पक्षकार राज्य प्रत्येक व्यक्ति के सामाजिक बीमा सहित सामाजिक सुरक्षा के अधिकार को मान्य रखते हैं।

धारा -12

(1) पक्षकार राज्य प्रत्येक व्यक्ति के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को उच्चतम साध्यक्षम मानक अधिभोग के अधिकार को स्वीकार करते हैं।

(2) इस अधिकार को पूरी तरह हासिल करने के लिए पक्षकार राज्यों को निम्न कदमों को उठाना चाहिए:

(क) गर्भस्थ शिशु और बाल मृत्यु दर में कमी और बच्चे के स्वस्थ विकास के लिए प्रावधान।

(ख) पर्यावरण और औद्योगिक स्वास्थ्य के सभी पहलुओं में सुधार।

(ग) महामारियों, घातक बीमारियों, व्यावसायिक रोगों और अन्य रोगों का प्रतिरोध, उपचार और नियंत्रण।

(घ) इस तरह की परिस्थिति पैदा करना जिसमें बीमारी के

तालिका २: आइ.एल.ओ. द्वारा वर्णित सामाजिक सुरक्षा की शाखाएं

1. चिकित्सा देखभाल
भारी असहायता की हालत। कारण जो भी हो: गर्भावस्था, शय्याग्रस्तता, प्रतिरोधात्मक चिकित्सा देखभाल को भी कवर जाए।

2. बीमारी लाभ
शय्याग्रस्तता या असहायता के कारण काम करने की अक्षमता और इससे आय में ठहराव के सामने सुरक्षा।

3. बेरोजगारी लाभ
अनुकूल रोजगार मिलना असंभव होने के कारण कमाई ठहराव या कमाई क्षति के सामने सुरक्षा।

4. बुढ़ापा लाभ
एक निश्चित उम्र के बाद व्यक्ति जीवित हो तो उसे मिलने वाला लाभ।

5. रोजगार के दौरान चोट लगने के कारण लाभ
औद्योगिक दुर्घटना या निश्चित व्यावसायिक रोग के कारण काम करने की अक्षमता या शक्ति में कुछ गिरावट हो तो उससे मिलने वाला लाभ।

6. पारिवारिक लाभ
15 साल से कम उम्र के या स्कूल छोड़ने की उम्र से कम के बच्चों को भरण-पोषण के दायित्व के लिए मिलने वाला लाभ।

7. प्रसूति लाभ
बालक के जन्म से पहले और जन्म के बाद कार्य करने वाली माताओं की कमाई को बनाए रखने के लिए मिलने वाले लाभ।

8. अशक्ति का लाभ
किसी भी लाभकारी गतिविधि को करने की अक्षमता स्थायी होती है, या अस्थायी अक्षमता का लाभ जिस समय की अवधि के लिए मिलता हो वह लंबी हुई हो तो उसका लाभ।

9. उत्तराधिकार का लाभ
कमाई करने वाले की मौत के कारण विधवा या बच्चों को सहायता नहीं मिलने से प्राप्य मुआवजा।

मामले में सभी चिकित्सा सेवाएं उपलब्ध हों।

धारा-7 और धारा-11 में भी स्वास्थ्य देखभाल के प्रावधान शामिल हैं: 'पक्षकार राज्य काम करने की सुरक्षित और स्वस्थ स्थिति सुनिश्चित करने के लिए काम की उचित और अनुकूल स्थितियों को प्राप्त करने के लिए और जीने के पर्याप्त स्तर को प्राप्त करने के हर व्यक्ति के अधिकार को स्वीकार करता है।'

भारत में सामाजिक सुरक्षा

भारत ने 10/04/1979 को इस आइसीईसीआर को मान्य किया है और इससे इन प्रावधानों का पालन करना उसका कर्तव्य है। लेकिन आज, भले ही तीन दशकों से अधिक समय बीतने के बाद भी भारत में सामाजिक सुरक्षा कानून और प्रावधान उपरोक्त संकल्प के अनुसार नहीं हैं।

वास्तव में, 1980 के दशक में, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत महत्वपूर्ण प्रयासों किये गये थे। उसके द्वारा छठी और सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान सामाजिक क्षेत्रों में काफी निवेश किया गया। लेकिन 1990 के दशक के आरंभ में संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम के तहत आर्थिक सुधार हुए और प्रगति अटक गई और हमने सुधार के कई कदम उठाए। इसके बाद भारत में आर्थिक विकास दर बढ़ी है, लेकिन इस नई राजनीतिक अर्थव्यवस्था के तहत नीचे के 50 प्रतिशत लोगों का बहिष्कार और असमानता बढ़ी है।

यह भी उल्लेखनीय है कि सामाजिक सुरक्षा का जो रूप बनाया गया था वह आबादी के विभिन्न वर्गों के लिए अलग-अलग है। एक तरफ केंद्र और राज्य सरकारों के कर्मचारियों को जिन्हें आइ.एल.ओ. द्वारा निर्धारित सभी लाभ दिए जाते हैं।

उदाहरण के लिए, सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों के रूप में पेंशन, भविष्य निधि, ग्रेच्युटी, आदि के रूप में 2010-11 में ही 1,66,170 करोड़ रुपये प्राप्त हुए थे। यह रकम सकल घरेलू उत्पाद की 2.11 प्रतिशत थी। दूसरी ओर, गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोग हैं,

तालिका ३: भारत में सामाजिक सुरक्षा के लिए संवैधानिक प्रावधान

भारत के संविधान में सामाजिक सुरक्षा से संबंधित निम्नलिखित प्रावधान किए गए हैं:

1. अनुसूची - 9 में दी गई संयुक्त सूची में मुद्दे:

संख्या 23

सामाजिक सुरक्षा और बीमा, रोजगार और बेरोजगारी।

संख्या 24

श्रमिकों का कल्याण जिसमें काम की स्थिति, भविष्य निधि, 'नियोक्ता दायित्व, कार्यकर्ताओं को मुआवजा, अक्षमता और वृद्धावस्था पेंशन और समय पर मातृत्व लाभ शामिल हैं।

2. राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत

धारा - 39 (क):

पुरुषों और महिलाओं को जीवन निर्वाह के पर्याप्त संसाधनों को प्राप्त करने का समान अधिकार प्राप्त है।

धारा- 41

काम का, शिक्षा का और कुछ मामलों में सार्वजनिक मदद पाने का अधिकार।

धारा - 42

काम की उचित और मानवीय स्थितियां और मातृत्व के समय राहत के प्रावधान।

धारा- 46

अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देना।

जिन्हें विभिन्न कल्याणकारी और सामाजिक सहायता योजनाओं के तहत अस्थायी लाभ प्राप्त होते हैं। 2010-11 में इस तरह के लाभ की राशि 1,46,248 करोड़ रुपये थी जो सकल घरेलू उत्पाद का 1.85 प्रतिशत थी।

इसमें बीपीएल परिवारों के लिए, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के परिवारों के लिए सामाजिक सहायता और पेंशन योजना और असंगठित क्षेत्र के लिए पोषण, आवास, और श्रम कल्याण योजनाओं को भी शामिल किया गया था। यदि इसमें स्वास्थ्य देखभाल, जल आपूर्ति और स्वच्छता को शामिल किया जाए तो यह आंकड़ा 2,48,456 करोड़ रुपये से ऊपर पहुंचेगा। इस प्रकार, भारत में इस तरह की सामाजिक सुरक्षा के रूप में विभिन्न लाभों के बीच अंतर करने की आवश्यकता है क्योंकि ये सरकार कर्मचारियों को मिलने वाले व्यापक सामाजिक सुरक्षा लाभ भी हैं और गरीब और असहाय समूहों को ध्यान में रखकर बनाए सामाजिक सहायता के स्वामित्व वाले अस्थायी कार्यक्रम भी हैं।

यहां तालिका 1 में पिछले दो दशकों के दौरान भारत में सबसे महत्वपूर्ण सामाजिक सुरक्षा या सहायता योजनाओं में हुए खर्च का विवरण दिया गया है। इसमें वृद्धि की प्रवृत्ति जरूर दिखाई देती है लेकिन अभी भी भारत में दुनिया में सकल घरेलू उत्पाद तुलना में जो खर्च होता है उसमें आधे से थोड़ा ही अधिक है। वास्तव में, सरकारी कर्मचारियों को मिलने वाले सामाजिक सुरक्षा के लाभों में काफी वृद्धि हुई है और इसका कारण पांचवां और छठा वेतन आयोग है। इन सभी लाभों का 1990-91 में 27 फीसदी योगदान था और अब यह 40 फीसदी है।

इस प्रकार, बजट आवंटन या खर्च पर से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत में सामाजिक सुरक्षा लाभों में भारी मतभेद है। सरकारी कर्मचारियों को सुरक्षित और अच्छे वेतन वाला रोजगार तो है ही और उन्हें काफी उच्च स्तर वाली आजीवन सामाजिक सुरक्षा भी हासिल है। दूसरी ओर, जो लोग अपने जीवन भर अस्तित्व की लड़ाई लड़ते हैं उन्हें बजट में से शेष रहे संसाधनों में से अस्थायी लाभ मिलते हैं। ज्यादातर मामलों में, वे गरीबी रेखा के नीचे जीते हों तभी उन्हें सामाजिक सहायता या कल्याण कार्यक्रमों के विभिन्न प्रकार के लाभ उपलब्ध होते हैं। इसे हम दो परस्पर विरोधी उदाहरण से समझते हैं।

एक व्यक्ति भारत की सेना में काम करता है और वह मेजर के पद से रिटायर होता है जिसे सेवानिवृत्ति लाभ के रूप में भविष्य निधि

तालिका ४: भारत में संगठित क्षेत्र के लिए सामाजिक सुरक्षा

1. कर्मचारी भविष्य निधि और विविध प्रावधान अधिनियम - 1952
2. कारखानों और अन्य प्रतिष्ठानों में काम कर रहे श्रमिकों के लिए भविष्य निधि स्थापित करने के उद्देश्य बनाए गए कल्याणकारी कानून 20 या अधिक श्रमिकों को लागू पड़ता है:
   (क) कर्मचारी भविष्य निधि योजना-1952
   (ख) कर्मचारियों की जमा से जुड़ी बीमा योजना-1976
   (ग) कर्मचारी पेंशन योजना-1995
3. कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम-1948
- बीमारी, मातृत्व और रोजगार के दौरान चोट के मामले में स्वास्थ्य देखभाल और नकद लाभ।
- बिजली का उपयोग करने वाली फैक्टरी पर लागू।
- 20 या अधिक श्रमिकों वाले कारखाने पर लागू।
- 1500 रु. से कम वेतन वाले कर्मचारियों को लाभ मिलता है।

4. ग्रेच्युटी भुगतान अधिनियम - 1972
- अधिवर्षिता, सेवानिवृत्ति या त्यागपत्र के मामले में ग्रेच्युटी का भुगतान।
- किसी दुर्घटना या बीमारी के कारण मृत्यु या विकलांगता के मामले में भुगतान।
- 10 या अधिक श्रमिकों वाले कारखाने पर लागू।

5. मातृत्व लाभ अधिनियम - 1961
- कामकाजी महिलाओं के कल्याण के लिए प्रावधान।
- गर्भावस्था से पहले और बाद के समय की अवधि में काम करने पर प्रतिबंध।
- मातृत्व छुट्टियों के प्रावधान।
- गर्भावस्था की वजह से काम नहीं करने के लिए वित्तीय लाभ।
- एक सप्ताह के लिए मातृत्व लाभ की अधिकतम दर।

6. कामगार मुआवजा अधिनियम - 1923
- रोजगार दौरान या उसके परिणाम स्वरूप दुर्घटना होने पर नियोक्ता द्वारा कामगार को क्षतिपूर्ति।

7. नई पेंशन योजना (एनपीएस):
- अंशदान द्वारा स्वैच्छिक पेंशन योजना
- वित्त मंत्रालय के प्राधिकरण के द्वारा इसका प्रशासन।

और रुपये ग्रेच्युटी के 20 से 25 लाख रुपये मिलते हैं। इसके अलावा, पेंशन के रूप में अपने अंतिम वेतन का आधा लगभग 50,000 रु. मिलते हैं और वह मुद्रास्फीति की दर से संबंधित है। उसकी मृत्यु होने पर उनकी पत्नी को उनकी पेंशन की राशि का 50 प्रतिशत प्रति माह 25,000 रुपए की पेंशन यह जिंदा रहे तब तक मिलती है। इसके अलावा, उन्हें स्वास्थ्य देखभाल का खर्च, दांत-आंख के उपचार का खर्च, अस्पताल में इलाज या बाहर का पूर खर्च मिलता है। इसके अलावा, सब्सिडी के साथ किराने और लगभग सभी उपभोक्ता वस्तुएं कैंटीन सेवाओं के द्वारा उपलब्ध होती हैं। उन्हें मैस व क्लब की सेवाएं मिलना जारी रहता है ताकि वे अपने समुदाय के साथ सामाजिक रूप से जुड़े रहें। यह एक श्रेष्ठ स्थिति है और भारत में लगभग 15 प्रतिशत परिवारों को इस प्रकार के या लगभग ऐसे ही सामाजिक सुरक्षा लाभ प्राप्त होते हैं जो संगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं।

इसके विपरीत गरीबी रेखा के नीचे रहने वाला एक परिवार है जो दिहाड़ी मजदूर है। उसकी दैनिक मजदूरी का आधार बाजार पर है। जो वह भाग्यशाली हो तो उसे पूरे परिवार के लिए एक महीने के 5,000 रुपए मिल जाएं। उसे सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाएं मिलती हैं, लेकिन इसकी कोई गारंटी नहीं है कि जो सेवाएं उसे मिलनी चाहिए वे मिलेंगी ही। कई बार उसे इसके लिए भुगतान करना होता है। हो सकता है कि उसके बच्चे स्कूल ही न जाते हों क्योंकि हो सकता है कि परिवार की जरूरतों को पूरा करने के लिए वे मजदूरी करते हों। उसके पास बचत नहीं होती और भविष्य निधि, ग्रेच्युटी या उसके काम से संबंधित इस प्रकार के लाभ नहीं मिलते। उसे सेवानिवृत्ति की

उम्र के बाद भी बहुत लंबे समय तक काम करना पड़ता है। अगर उसके सरकारी मानक लागू होते हों तो उसे हर महीने 200 से 500 रुपये वृद्धावस्था या विधवा की पेंशन प्राप्त होगी, और इसमें मूल्य वृद्धि होने पर वृद्धि नहीं होती। यदि पति और पत्नी दोनों वृद्धावस्था पेंशन के लिए पात्र हों तो इसमें से एक को ही पेंशन मिलेगी। यदि वे भाग्यशाली हों, तो वह आर.एस.बी.वाई. में पंजीकृत होते हैं या इसी तरह का स्वास्थ्य बीमा मिलता है जिससे बड़ी बीमारी आने पर उसका आंशिक खर्च मिलता है। यह एक बहुत बुरी स्थिति है जिसका सामना भारत के दो-तिहाई परिवार कर रहे हैं। शेष 20 प्रतिशत मध्यम वर्ग के लोगों को सामाजिक सुरक्षा के लिए अपने आप व्यवस्था करनी होती है। यह व्यवस्था उनकी बचत से होती है या परिवार या समुदाय की सहायता से यह व्यवस्था होती है। उन्हें संगठित क्षेत्र के लाभ नहीं मिलते और उन्हें राज्य सरकार या केंद्रीय सरकार के सामाजिक सहायता कार्यक्रमों के लाभ भी नहीं मिलते।

भारत में सामाजिक सुरक्षा की राजनीतिक अर्थव्यवस्था इस तरह की है और इसलिए एक बड़ी चुनौती है। सामाजिक सुरक्षा के लिए सकल घरेलू उत्पाद का केवल 6 प्रतिशत ही खर्च होता है और उसका लगभग आधा खर्च तो भारत की मात्र 15 प्रतिशत उच्च वर्ग की आबादी पर होता है। पिछले दशक में शेष 85 फीसदी आबादी के लिए अधिक संसाधनों को समर्पित करने की प्रवृत्ति पैदा हुई है, लेकिन इसे बहुत अस्थायी आधार पर किया जाता है। उन्हें ध्यान में रखकर योजनाएं तैयार की जाती हैं और उसमें वोट बैंक के लक्ष्यों को ध्यान में रखा जाता है, लेकिन बुनियादी सामाजिक सुरक्षा को स्थायी तौर पर प्रदान करने पर विचार नहीं किया जाता। संप्रग सरकार के दौरान महत्वपूर्ण कार्यक्रमों को मूल रूप से ऐसे ही करने की कोशिश की गई है और सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के लिए एक बहुत बड़ा बजट आवंटित किया गया है। लेकिन उनका दृष्टिकोण टुकड़ों में रहा है और इसके परिणाम स्वरूप सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने के मामले में, निर्देशकों में पर्याप्त सुधार नहीं हुआ। वैसे, नरेगा, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, सर्व शिक्षा अभियान, राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम, आर.एस.बी.वाई., इंदिरा आवास योजना, आईसीडीएस

तालिका ५: भारत में असंगठित क्षेत्र के लिए सामाजिक सुरक्षा

1. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम - 2005 (परिभाषा की दृष्टि से नरेगा सामाजिक सुरक्षा है, सिवाय कि इसमें बेकारी भत्ता दिया जाए):

- ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी या अनुत्पादक नौकरियों को रोकने का उद्देश्य।
- यह ग्रामीणजनों के जीवन निर्वाह की सुरक्षा पर ध्यान केंद्रित करती है, क्योंकि यह वर्ष में कम से कम 100 दिन के रोजगार की गारंटी देती है।

2. असंगठित श्रमिक सामाजिक सुरक्षा अधिनियम - 2008

- असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है।
- संगठित क्षेत्र के श्रमिकों की जो स्थिति है और जो लाभ प्रदान किए जाते हैं वे असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को दिलाना इसका उद्देश्य है।

3. घरेलू श्रमिक अधिनियम - 2008

- घरेलू कामगारों की काम की स्थिति और भुगतान विनियमन का प्रयोजन। प्रत्येक पंजीकृत घरेलू कामगार को पेंशन, मातृत्व लाभ और वेतन के साथ सप्ताह भर की छुट्टियों का हकदार बनाता है।

4. विभिन्न व्यावसायिक समूहों के लिए उपकर पर आधारित कल्याण निधि उद्यान श्रमिकों, खान मजदूरों, निर्माण मजदूरों, बीड़ी श्रमिकों, सिनेमा श्रमिकों, माथोडी श्रमिकों, वजन उठान वाले मजदूरों, आदि।

5. सार्वजनिक वितरण प्रणाली, इंदिरा आवास योजना, एकीकृत बाल विकास योजना, मध्यान्ह भोजन योजना, वृद्धावस्था पेंशन योजना, विधवा पेंशन योजना, आर.बी.एस.वाई. और अन्य बीमा योजनाओं जैसी सामाजिक सहायता योजनाएं जो कुछ निश्चित समूहों के लिए बनाई गई हैं।

आदि के द्वारा सामाजिक सुरक्षा में वृद्धि हुई है लेकिन टुकड़ों में दृष्टिकोण के कारण उनका प्रभाव नगण्य रहा है। इसके अलावा, इन कार्यक्रमों को विभिन्न विभागों द्वारा लागू किया जाता है और उनके बीच कोई तालमेल नहीं होता, और इसके परिणाम स्वरूप नौकरशाही में भ्रम और प्रबंधन में विफलता पैदा होती है और इससे जो पैसा खर्च होता है वह बेकार चला जाता और सभी प्रयास विफल हो जाते हैं। एन.सी.ई.यू.एस. द्वारा सामाजिक सहायता की इन योजनाओं के बीच संकलन का प्रयास किया गया है और असंगठित क्षेत्र के लिए व्यापक सामाजिक सुरक्षा पैदा करने की कोशिश कर रहा है।

इसके परिणाम स्वरूप असंगठित मजदूर सामाजिक सुरक्षा अधिनियम-2008 नामक कानून बना है और उसका कार्यान्वयन 2009 में शुरू हुआ है। लेकिन यह कानून बेदम साबित हुआ है और उसको वास्तविक रूप में लागू करने के लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति की जरूरत है। इस कानून ने सिर्फ इतना काम किया है कि सभी 10 मौजूदा योजनाओं को एक साथ अनुबंध-1 में रखा गया है:

1. इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना।
2. राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना।
3. माता - पिता कल्याण योजना।
4. हथकरघा बुनकर व्यापक कल्याण योजना।
5. हस्तशिल्प कारीगर व्यापक कल्याण योजना।
6. मास्टर क्राफ्ट व्यक्ति पेंशन।
7. राष्ट्रीय मछुआरा कल्याण, प्रशिक्षण और विस्तार योजना।
8. जनश्री बीमा योजना।
9. आम आदमी बीमा योजना।
10. राष्ट्रीय स्वास्थ्य बीमा योजना।

इस प्रवृत्ति को जारी रखते हुए यूपीए सरकार अब इस तरह की सामाजिक योजनाओं को एकीकृत करके सीधे नकद हस्तांतरण योजना शुरू कर रही है। 2013 में, वित्त मंत्रालय के अनुमान के अनुसार इसके लिए 2 लाख करोड़ रुपये खर्च होना है। इस प्रकार, एक ओर तो यह विभिन्न योजनाओं को लागू करने से दूर भागने की कोशिश कर रही है तो दूसरी तरफ चुनाव जीतने के लिए इस तरह गाजर लटका रही है। यह रणनीति सरकार की कमजोर नीति का एक स्पष्ट संकेत देती है, वह सामाजिक सुरक्षा के संबंध में अपर्याप्त रणनीति को भी दर्शाता है और इससे सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा से हम अधिक दूर हो जाएंगे। दूसरी ओर, नागरिक समाज और विभिन्न लोक - आंदोलनों में सामाजिक सुरक्षा के मुद्दे पर अधिक रुचि जागृत हो रही है। नागरिक समाज के संगठन इसमें अधिक से अधिक शामिल हो रहे हैं। ऐसा ही एक प्रयास पेंशन परिषद है। इसने न्यूनतम वेतन की कम से कम 50 प्रतिशत राशि या प्रति परिवार 2000 रु. मासिक की सार्वभौमिक पेंशन का अनुरोध किया है। इसके अलावा, जन स्वास्थ्य अभियान द्वारा सार्वभौमिक स्वास्थ्य देखभाल की मांग की जा रही है। 12वीं पंचवर्षीय योजना में इसे शामिल किए जाने पर विचार किया जा रहा है। नागरिक समाज के इन प्रयासों को कई गुना बढ़ाने की जरूरत है ताकि सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य देखभाल एक राजनीतिक मुद्दा बन सके। विभिन्न प्रगतिशील नीति के लक्ष्यों को निर्धारित किया जाना शुरू हुआ है। सकल घरेलू उत्पाद का 3 प्रतिशत खर्च स्वास्थ्य देखभाल के लिए और 5 प्रतिशत खर्च शिक्षा के लिए और आइ.एल.ओ. के मानक के अनुसार सामाजिक सुरक्षा का विस्तार निर्धारित किया गया है। सरकारी कर्मचारियों और संगठित क्षेत्र जैसी व्यापक सामाजिक सुरक्षा विकसित करने का विचार किया गया है। 2008 में असंगठित क्षेत्र के लिए जो कानून बनाया गया था वह पहला कदम था। अब उसे आधार पर नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा को प्रभावी रूप में स्थापित करना है, और यह देखना है कि उपलब्ध अधिकतम संसाधनों का इस्तेमाल उन लोगों के लिए हो।

सामाजिक सहायता की कई योजनाओं का निर्माण करके तथा पुनर्निर्माण करके और एक व्यापक सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रम तैयार किया जाना चाहिए। यह कार्यक्रम भले ही लक्षित न हो लेकिन एक सार्वभौमिक लाभ मिले इस अधिकार के साथ होना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में पहला कदम उठाया गया है, स्वास्थ्य देखभाल में सभी को कवर करने के लिए बहस शुरू हो गई है, तब इन सबको सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा के तहत कवर करने की

आवश्यकता है। तालिका 1 के अनुसार हम सकल घरेलू उत्पाद का 3 प्रतिशत खाद्य सब्सिडी सहित सामाजिक सुरक्षा और स्वास्थ्य पर खर्च कर रहे हैं। कम से कम इसे दो गुना करना अपेक्षित है जिससे हम मध्यम आय वाले देशों के स्तर तक पहुँच सकें। पर्याप्त मात्रा में राजनीतिक इच्छाशक्ति हो और नागरिक समाज का दबाव हो तो संसाधन तो हैं ही। बकाया कर वसूली और छोड़ दी गयी आय सकल घरेलू उत्पाद की 6 प्रतिशत है।

इसके अलावा, टैक्स हेवन देशों में जो बेहिसाबी धन जाता है वह सकल घरेलू उत्पाद का लगभग एक - तिहाई हिस्सा है। अतः कर - जीडीपी अनुपात जो वर्तमान में 16 फीसदी है उसे 30 फीसदी तक आसानी से ले जाया जा सकता है। इससे सार्वभौमिक सामाजिक सुरक्षा के लिए जरूरी सभी संसाधन हम प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए राजनीतिक इच्छाशक्ति और नेतृत्व की जरूरत है।

पृष्ठ 24 का शेष

1. शिक्षा

1. वह परिवार जिसमें किसी ने भी पांच साल का शिक्षण पूरा नहीं किया हो।
2. वह परिवार जिसमें स्कूल जाने की न्यूनतम उम्र वाले बच्चे को पंजीकृत नहीं किया हो।

2. स्वास्थ्य

1. वह परिवार जिसमें कम से कम एक सदस्य कुपोषण से पीड़ित हो।
2. वह परिवार जिसमें कुपोषण के कारण एक या एक से अधिक बच्चों की मौत हो गई हो।

3. जीवन मानक

1. बिजली न हो
2. स्वच्छ पीने का पानी नहीं मिलता हो
3. पर्याप्त सफाई व्यवस्था न हो
4. घर में आंगन मिट्टी का हो
5. ईंधन के रूप में लकड़ी, कोयला या गोबर का प्रयोग किया जाता हो
6. जिनके पास कार न हो, बल्कि साइकिल, मोटर साइकिल, रेडियो, फ्रिज, फोन या और टीवी में से कोई एक वस्तु हो।

तालिका 5 में बहु - आयामी गरीबी सूचकांक की दृष्टि से भारत, बांग्लादेश और पाकिस्तान की स्थिति का का विवरण दिया गया है। सूचकांक अधिक तो गरीबी अधिक। तालिका से पता चलता है कि भारत की तुलना में पाकिस्तान में गरीबी कम है, लेकिन बांग्लादेश में अधिक है। हालांकि, तीव्र गरीबी से पीड़ित लोगों की संख्या काफी अधिक है। तालिका के आधार पर कहा जा सकता है कि तीनों देशों में वंचितता का अनुभव लोगों को लगभग समान रूप से होता है।

पृष्ठ 33 का शेष

उर्दू में अनुवाद भी किया गया था। कौमी एकता और सामाजिक सुधारों के लिए प्रतिबद्ध इस योद्धा को श्रद्धांजलि।

श्री गिरिराज सिंह

सारथी (भारत के ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों के निवासियों के लिए सामाजिक कार्य) के संस्थापक निदेशक श्री गिरिराज सिंह का मई, 2013 में निधन हो गया। राजस्थान के सोशल वर्क एंड रिसर्च सेंटर (एस.डब्ल्यू.आर.सी.) - तिलोनिया शाखा के रूप में, अगस्त 1980 में सारथी की स्थापना की गई थी। जुलाई 1985 में इसे एक स्वतंत्र संस्था के रूप में पंजीकृत किया गया था। ग्रामीण विकास में स्थानीय स्तर के एक गैर सरकारी संगठन के रूप में सारथी का विशद अनुभव रहा है। गुजरात, राजस्थान और मध्य प्रदेश की सीमा पर आदिवासी पट्टी में भील आदिवासियों के क्षेत्र में श्री गिरिराज सिंह ने स्वास्थ्य, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और महिला सशक्तिकरण पर ध्यान केंद्रित करके सारथी के माध्यम से कई कार्यक्रम चलाए थे। परम दयालु परमात्मा से प्रार्थना है कि वह उनकी आत्मा को शांति प्रदान करे।

ग्राम पंचायत में जन सुनवाई सहायता केन्द्र

राजस्थान सरकार ने जनता की शिकायतों का प्रभावी समाधान करने के लिए प्रत्येक ग्राम पंचायत कार्यालय में निर्मित भारत निर्माण राजीव गांधी सेवा केन्द्र में जन सुनवाई सहायता केंद्र का शुभारंभ किया है। राजस्थान जन सुनवाई अधिकार अधिनियम-2012 को निष्पादित करने के लिए 9.4.2013 को पर प्रशासनिक सुधार और समन्वय विभाग द्वारा जारी किए गए एक आदेश के अनुसार जन सुनवाई सहायता केंद्र में नागरिकों के लिए एक सूचनापट्ट लगाया जाएगा। इसमें सामान्य जानकारी दी जाएगी। यह व्यवस्था 20.4.2013 से लागू हो गई है।

इस आदेश के अनुसार विभिन्न सरकारी विभागों की योजनाओं और लाभार्थियों की सूची को पंचायत कार्यालय की दीवार पर लिखना होगा होगा। हर साल अप्रैल के महीने में इस सूची को अद्यतन करना होगा। इसमें मुख्यमंत्री आवास योजना, इंदिरा आवास योजना, नरेगा, आंगनबाड़ी केंद्र, सस्ते अनाज की दुकान, राजीव गांधी विद्युतीकरण योजना, जननी सुरक्षा योजना, सामाजिक सुरक्षा से संबंधित सभी योजनाओं, आदि जैसी कुल 14 योजनाएं शामिल हैं।

यहां यह उल्लेखनीय है कि नागरिकों को निर्धारित समय के भीतर सुनवाई का अधिकार दिलाने के लिए 21.5.2012 को राजस्थान जन सुनवाई अधिकार अधिनियम -2012 को लागू किया गया है। इसके बाद इसके लिए नियम 7.6.2012 को बनाए गए और ये नियम 11.6.2012 से लागू किये गए।

इस कानून के तहत 15 दिनों के भीतर ग्राम पंचायत कार्यालय में सुनवाई का अधिकार प्राप्त होता है। इसके अलावा, एक 'सुगम' व्यवस्था भी की गई है जिसके अनुसार 0141-2227549 नंबर पर शिकायत की जा सकती है। जिला कलेक्टर या सुगम केंद्र, सचिवालय, जयपुर को डाक से भी शिकायत की जा सकता है और नागरिकों को 15 दिनों में जवाब प्राप्त करने का अधिकार है। यदि निर्धारित समय सीमा में जन सुनवाई न हो, तो सुनवाई अधिकारी को 500 से लेकर 5000 रुपये तक दंड हो सकता है और उसे उनके वेतन से वसूल किया जाएगा।

श्रद्धांजलि

असगरअली इंजीनियर
शांतिवादी सुधारक कार्यकर्ता

प्रसिद्ध धार्मिक सुधारक और कार्यकर्ता असगरअली इंजीनियर का 14.5.2013 को मुंबई में उनके निवास पर निधन हो गया। न्यायी, समतापूर्ण और संवादी दुनिया के लिए उन्होंने संघर्ष किया था। धार्मिक सुधार और कौमी एकता के लिए उन्होंने जीवन भर काम किया। अपने इस काम के लिए उन्हें कई राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय पुरस्कार मिले थे जिनमें 2004 में स्वामी अग्निवेश के साथ उन्हें मिला 'द राइट्स लाइवलीहुड' शामिल है जिसे वैकल्पिक नोबेल पुरस्कार के रूप में जाना जाता है।

कुरान और इस्लामिक साहित्य के तो मानो वे विश्वकोश थे। 1974 में उन्होंने दाऊदी बोहरा मुस्लिम समुदाय के गुरु द्वारा किए जा रहे शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई थी। असगरअली इंजीनियर स्वयं दाऊदी बोहरा थे। उन्हें अपने समुदाय के रुढ़िवादियों के गुस्से का भोग बनना पड़ा था। यह इस हद तक था कि उन पर पांच बार हमला किया गया था। एक बार तो वे गंभीर रूप से घायल हो गए थे। सन् 2000 में उनके घर को लगभग पूरी तरह से तोड़ दिया गया था। लेकिन उन्होंने कभी भी साहस और प्रतिबद्धता नहीं छोड़ी थी। उनके खिलाफ वोहरा मुसलमानों का विरोध इतना तीव्र था कि उन्होंने असगरअली इंजीनियर को दफनाने के लिए अपने कब्रिस्तान में जगह नहीं दी थी। उनकी अंत्येष्टि सुन्नी कब्रिस्तान में हुई थी।

असगरअली इंजीनियर एक सुधारवादी लेखक थे। उन्होंने लगभग 70 पुस्तकें लिखी और हजारों लेख लिखे थे। उन्होंने 'लिविंग फेथः माई क्वेस्ट फॉर पीस, हार्मनी एन्ड सोशल चेन्ज' नामक अपनी आत्मकथा लिखी जो 2011 में प्रकाशित हुई। इसका मराठी और

शेष पृष्ठ 32 पर

संदर्भ सामग्री

आवास सुरक्षा के बारे में जागरूकता अभियान - मार्गदर्शिका

आपदा के दौरान मकान के गिरने से या क्षतिग्रस्त होने से घायल होते हैं और जान हानि होती है। मकानों के नुकसान के कारण लोगों के जीवन और आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मकान के पुनर्निर्माण में परिवार के जीवन भर की आय खर्च हो जाती है। इसलिए मकानों की असुरक्षा और कमियों की जाँच करना और उन्हें ठीक किया जाना आवश्यक है।

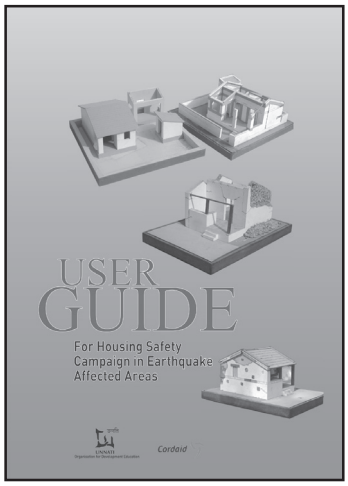

आपदा जोखिम में कमी करने वाली लोक - आधारित प्रक्रिया में भी जोखिम कम करने और साथ ही सामुदायिक स्तर की तैयारियों को विकसित करना आवश्यक है। देश में इंजीनियरों की मदद के बिना, पारंपरिक प्रौद्योगिकी से बने लाखों मकान हैं। अपने आसपास उपलब्ध कारीगरों और निर्माण सामग्री की मदद से लोगों ने इन्हें बनाया है। इस तरह के आवासों की सुरक्षा का आकलन करना काफी आवश्यक है। मकानों की सुरक्षा के मूल्यांकन के दौरान निर्माण कार्यों में सुरक्षा के पहलुओं के बारे में जानकारी प्रदान की जा सकती है ताकि समुदाय मकानों के निर्माण कार्यों में इन बातों का ध्यान रखने लगे।

2012 में 'उन्नति' संस्था द्वारा कच्छ जिले भचाऊ तालूका के गांवों में सुरक्षित घरों के बारे में जागरूकता अभियान चलाया गया था। उसके अनुभवों के आधार पर यह मार्गदर्शिका तैयार की गई है। 2001 में कच्छ के भूकंप के बाद पुनर्वास के कार्य में मकानों के निर्माण कार्य में भूकंप से सुरक्षा पहलुओं को लागू किया गया था। हालांकि, इस घटना के एक दशक बाद हाल ही बन रहे भवनों या पुरानी इमारतों की मरम्मत और विस्तार में भूकंप सुरक्षा के कई महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इस मुद्दे को उठाते हुए भवन निर्माण सुरक्षा के बारे में जागरूकता अभियान आयोजित किया गया था। इस तरह के अभियानों की पूर्व तैयारी के लिए आकलन और जागरूकता कार्यक्रमों को चलाने की प्रक्रियाओं के बारे में यह मार्गदर्शिका तैयार की गई है। इस मार्गदर्शिका में भूकंप सुरक्षित निर्माण कार्य करने के लिए सचित्र विवरण दिया गया है। जो आपदाओं में आवासीय सुरक्षा बनी रहे उसके लिए अभियान चलाते हैं और लोगों को समझ प्रदान करते हैं उनके लिए यह मार्गदर्शिका बहुत उपयोगी है।

स्कूल सुरक्षा के बारे में जागरूकता अभियान न मार्गदर्शिका

पिछली कई आपदाओं के अनुभवों से यह हासिल हुआ है कि स्कूली बच्चे सबसे अधिक असहाय और खतरे में होते हैं खासकर तब जब आपदा स्कूल समय के दौरान हुई हो। जो स्कूलें खतरनाक साइटों पर बनी हों या उनके भवन में पर्याप्त सुरक्षा व्यवस्था न हो तो बच्चों की असहायता बढ़ती है। इसके अलावा, यदि स्कूलों में आपात स्थिति के समय बच्चों को स्कूल की इमारत के बाहर निकलने की सुरक्षित और उचित व्यवस्था नहीं हो तो बच्चों को काफी चोट लग सकती है या उनकी जान भी जा सकती है। हम पिछली कई आपदाओं पर नज़र डालें तो, 2001 के गुजरात के भूकंप में स्कूलों के 971 छात्रों और 31 शिक्षकों का निधन हो गया था। स्कूलों में 8000 में कमरे पूरी तरह से नष्ट हो गए थे और 42,000 कमरों को भारी नुकसान पहुंचा था। 2004 में तमिलनाडु के कुंभकन्नम की शाला में आग बुझाने की पूरी तैयारियों के अभाव में आग के दौरान 93 छात्र आग में भस्म हो गए थे। 1995 में हरियाणा में स्कूल के कार्यक्रम में दुर्घटना होने के कारण 200 बच्चों की जान चली गई थी। 2005 में, कश्मीर के भूकंप में स्कूल की इमारत गिरने से कई बच्चों की जान चली गई थी। इन सभी परिस्थितियों में छात्रों और शिक्षकों का जीवन बचाया जा

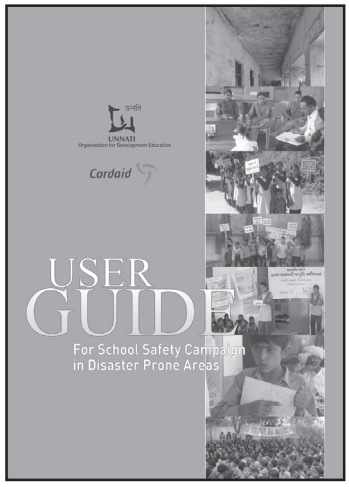

सकता था यदि स्कूलों में सुरक्षित निर्माण कार्य, सुरक्षित व्यवस्था और पूर्व तैयारी की व्यवस्था होती। इस प्रकार, स्कूली बच्चों और स्कूल स्टाफ के जीवन की सुरक्षा के लिए इसकी सख्त जरूरत है। स्कूलों के सभी बच्चों को संरक्षा, सुरक्षा, पूर्व तैयारी, सुरक्षित स्थानों, खोज और बचाव, प्राथमिक चिकित्सा, आदि के बारे में शिक्षा प्रदान करना आवश्यक है। इसके अलावा यह भी उतना ही आवश्यक है कि स्कूल भवन संरचनात्मक रूप से सुरक्षित हों और वहां की व्यवस्था जोखिम से बचने के लिए कारगर हों। स्कूलों में आग शमन प्रणाली, प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल किट, प्रशिक्षित कार्यबल आपात स्थिति के समय में बहुत उपयोगी होता है।

गुजरात के 2001 में आए भूकंप के बाद जी.एस.डी.एम.ए. द्वारा भूकंपग्रस्त 150 स्कूलों में स्कूल सुरक्षा का प्रायोगिक कार्यक्रम हाथ में लिया गया था। 2011 में शुरू, राष्ट्रीय स्कूल सुरक्षा कार्यक्रम के तहत गुजरात के जामनगर और कच्छ जिले में 400 स्कूलों में सुरक्षा कार्यक्रम कार्यान्वित किया गया है। कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य स्कूल में सुरक्षा का वातावरण और व्यवस्था तैयार करना है। स्कूल को सुरक्षित और सक्षम बनाने की कोशिश करने में स्कूल के विभिन्न हितधारकों को जोड़ना इस कार्यक्रम का उद्देश्य है।

स्कूल सुरक्षा के महत्व पर प्रकाश डालने के लिए 'उन्नति' द्वारा कच्छ जिले में भचाऊ तालूका के गांवों की 20 स्कूलों में अभियान चलाया गया था। इसमें 2970 बच्चों, 96 शिक्षकों, स्कूल प्रबंधन समिति (एसएमसी) के 23 सदस्यों और समुदाय के 341 सदस्यों ने भाग लिया था। शुरू में अभियान की पूर्व तैयारी के लिए 'उन्नति' की टीमों ने गांवों और स्कूलों में जाकर स्कूल प्रबंधन समिति, स्कूल प्रशासकों और सरपंचों के साथ चर्चा की थी। इस अभियान में हुए अनुभवों के आधार पर यह मार्गदर्शिका तैयार की गई है कि स्कूलों में सुरक्षा किस तरह की जाए। इस मार्गदर्शिका में संरचनात्मक पहलुओं और गैर - संरचनात्मक पहलुओं को शामिल किया गया है। इसके अलावा, इस तरह के एक अभियान चलाने के लिए अनुभव सिद्ध जानकारियां भी दी गई हैं। मार्गदर्शिका के अंत में स्कूल सुरक्षा जागरूकता अभियान की योजना और निष्पादन करते समय ध्यान देने वाली बातों का भी विस्तार से वर्णन किया गया है।

विकास व्यवहार में एम.फिल. की डिग्री

भारत रत्न डॉ. बी. आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय, दिल्ली के विकास अध्ययन स्कूल और मानव अध्ययन स्कूल द्वारा यह डिग्री पाठ्यक्रम शुरू किया है। यह दो साल का कोर्स अंग्रेजी माध्यम में है, और 55 प्रतिशत अंकों के साथ लगभग किसी भी विषय में मास्टर डिग्री वाले छात्रों को दाखिला दिया जा सकता है। यह पाठ्यक्रम गैर सरकारी संगठन 'प्रदान' के सहयोग से शुरू किया गया है। इसमें 25 छात्रों को प्रवेश दिया जाता है। अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें: www.aud.ac.in

स्वास्थ्य के अधिकार पर सहभागी प्रशिक्षण कार्यक्रम

पश्चिमी राजस्थान के अकाल संभावित जिलों में पिछड़े दलित और आदिवासी समुदायों की क्षमता वर्धन और सामाजिक समावेश के कार्यक्रमों के भाग के रूप में स्वास्थ्य के अधिकार के बारे में में सहभागी प्रशिक्षण कार्यक्रम के बारे में एक भित्ति चित्र पुस्तिका तैयार की गई है। यह पुस्तिका महिलाओं और किशोरियों के स्वास्थ्य पर केंद्रित है। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और किशोरियों के स्वास्थ्य की विशिष्ट आवश्यकताओं के बारे में समझ विकसित करने के लिए यह पुस्तिका तैयार की गई है।

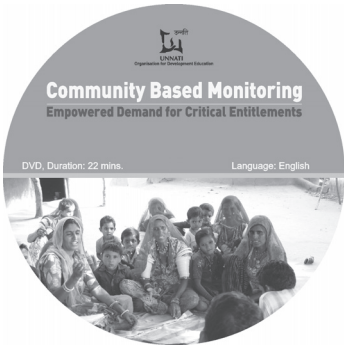

स्वास्थ्य का अधिकार, महिला - पुरुष भेदभाव आधारित हिंसा और स्वास्थ्य से वंचितता, काम के बोझ और स्वास्थ्य, अपर्याप्त पोषण का विषचक्र, किशोरियों को स्वास्थ्य की विशिष्ट जरूरत, गर्भवती महिलाओं को स्वास्थ्य की जरूरत, नवजात शिशुओं और बच्चों को स्वास्थ्य की जरूरत, टीकाकरण, आदि को ध्यान में लेकर यह पुस्तिका द्वारा तैयार की गई है। इस पुस्तिका में सभी विषयों के बारे में एक-एक पोस्टर तैयार किया गया है। बड़े आकार की इस पुस्तिका को ग्रामीण जन अपने खुद के घर में एक दीवार पर लटका सकते हैं और ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य की बुनियादी समझ का विकास करने के लिए अभियान चलाने वाले प्रशिक्षकों के लिए यह बहुत उपयोगी है।

समुदाय आधारित निगरानी

यह हिंदी और अंग्रेजी में एक शैक्षिक फिल्म है। इस फिल्म में, सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जा रही विभिन्न सेवाओं पर समुदाय कैसे देखरेख कर रहे हैं और सेवा प्रदाताओं पर किस तरह सामाजिक जवाबदेही पैदा की जाती है उस बारे में बात की गई है। राजस्थान में थार रेगिस्तान के 50 दूरदराज के गांवों में समुदाय स्वयं 2500 परिवारों तक 6 महत्वपूर्ण सेवाओं पहुँचाने के लिए का सामुदायिक निगरानी रखी थी। यह लगभग इसी का दस्तावेज़ीकरण है। 22 मिनट की यह फिल्म नागरिकों के अधिकार के लिए मांग कैसे की जा सकती है व लोग कैसे अपने अधिकारों को प्राप्त कर सकते हैं उसके लिए प्रेरणा देती है।

नोटः

स्कूल सुरक्षा जागरूकता अभियान मार्गदर्शिका और आवास सुरक्षा जागरूकता अभियान मार्गदर्शिका गुजराती और अंग्रेजी में उपलब्ध है। इन दोनों की डिजिटल कॉपी विकास और प्रसार को बढ़ावा देने के लिए वेबसाइट पर उपलब्ध है। 'स्वास्थ्य के आधार पर प्रतिभागी प्रशिक्षण कार्यक्रम' के लिए भित्ति चित्र पुस्तिका हिन्दी में उपलब्ध है। फिल्म हिंदी और अंग्रेजी दोनों में उपलब्ध है।

प्राप्ति स्थानः 'उन्नति'

उन्नति

उन्नति

विकास शिक्षण संगठन

जी-1, 200, आज़ाद सोसायटी, अहमदाबाद-380015

फोनः 079-26746145, 26733296 फैक्सः 079-26743752 email: sie@unnati.org वेबसाइटः www.unnati.org

राजस्थान क्षेत्रीय कार्यालय

650, राधाकृष्णन पुरम, लहरिया रिसोर्ट के पास, चौपासनी-पाल बाई पास लिंक रोड, जोधपुर-342008, राजस्थान

फोनः 0291-3204618 email: jodhpur_unnati@unnati.org

विस्तृत जानकारी के लिए संपर्कः दीपा सोनपाल, ईमेलः sie@unnati.org, publication@unnati.org

अनुवादः आर. के. गुप्ता **ले-आउटः** रमेश पटेल - उन्नति

मुद्रकः बंसीधर ऑफसेट, अहमदाबाद

केवल सीमित वितरण के लिए